लोसली

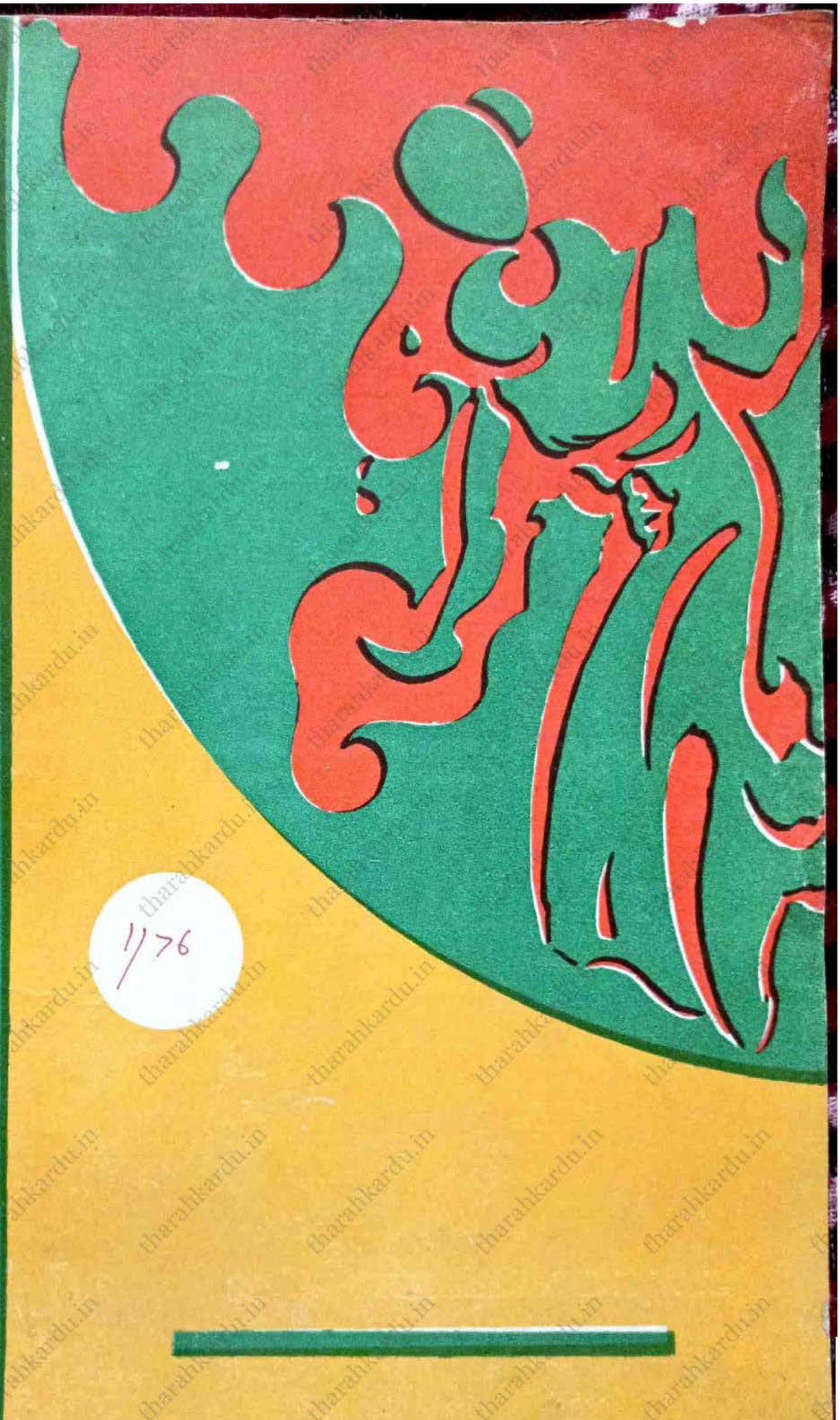

1/76

tharahkardu.in

सोमसी

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी का त्रैमासिक मुख-पत्र

वर्ष 2 जनवरी, 1976 अंक 1

प्रबन्धक-सम्पादक
एच० सी० पराशर

सम्पादक
डा० बंशी राम शर्मा

परामर्श-मण्डल
1. आचार्य दिवाकर दत्त शर्मा
2. श्री खेम राज गुप्त
3. श्री हरि राम जसटा
4. श्री मौलूराम ठाकुर

सहयोगी
सरोज शर्मा

आवरण
तिलक राज

प्राप्ति-स्थान :
हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परिमहल,
शिमला-171009

tharahkardu.in

सम्पादकीय

सांस्कृतिक धरोहर मानव-समाज की आध्यात्मिक एवम् भौतिक प्रगति का महत्वपूर्ण सोपान है । समाज-शास्त्रीय अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अपने विकास-काल के आरम्भ में सम्पूर्ण मानव जाति किसी एक स्थान पर रहती होगी । भाषा-सम्बन्धी एकता की परख विशेषज्ञों का विषय है परन्तु सांस्कृतिक धरातल पर प्रायः एक जसी मान्यताओं तथा मानव-रुचियों को देख कर यह धारण पुष्ट होती है कि वर्तमान समय में सुदूर दुर्गम क्षेत्रों में निवास करने वाली जातियों में तथा सभ्यतम कहे जाने वाले मानव-समाज में प्रचलित विश्वासों, मान्यताओं तथा भावनाओं में परिवेश—अन्तराल के बावजूद भी कहीं साम्य व एकता की जड़ विद्यमान है । यदि समग्र मानव-जाति की सांस्कृतिक मान्यताओं को विभिन्न एक जैसे शीर्षकों के अन्तर्गत निष्पक्ष तथा सचेत अध्ययन के अन्तर्गत देखा-परखा जाए तो यह मूलभूत एकता इतनी चौंकाने वाली होगी कि एक वर्ग को दूसरे का भाई-बन्धु घोषित करने में कठिनाई नहीं होगी, परन्तु विडम्बना यह है कि विभिन्न समाजों के जो अध्ययन प्रकाश में आए है उनमें पूर्वाग्रहों का हाथ अधिक रहा है ।

सुदूर प्राचीनकाल में हमारे पूर्वजों ने लम्बी यात्राएं की हैं । उनके अनुभव, परिवेश में चिन्तन के कारण किए गए परिवर्तन तथा समय के पद-चिन्हों के निशान आदि सभी बातों ने वर्तमान समाज के अध्येता को प्रागैतिहासिक मानव की सामाजिक व्यवस्था पर अलग ढंग से सोचने के लिए विवश कर दिया है । जो जैसा जिस समाज में प्रचलित है उसे उसी रूप में संकलित व सुरक्षित करना तथा उसके आधार पर सांस्कृतिक धरातल का आकलन करना हमारा प्रमुख उद्देश्य है । समाज में प्रचलित अच्छा या बुरा, प्राचीन तथा अर्वाचीन उसके भविष्य के इतिहास का अंग है, अतः मूल्यवान है ।

इस दिशा में सोमसी अपने प्रथम वर्ष में क्या कुछ कर पाई है इसका मूल्यांकन विद्वान पाठकवर्ग कर चुका होगा । इस अंक के साथ हम अपने सहृदय लेखकों, पाठकों तथा सहयोगियों का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं तथा उन्हें नए वर्ष के लिए मंगलकामनाएं प्रस्तुत करते हैं ।

—बंशी राम शर्मा

सोमसी

वर्ष 2 अंक 1

जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्तूबर में प्रकाश्य।

लेखक के विचारों तथा दिए गए तथ्यों से सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं।

प्रकाशित रचनाओं को पूर्ण अथवा आंशिक रूप में उद्धृत करने के लिए सचिव, हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परिमहल शिमला-9 की अनुमति अनिवार्य है।

वार्षिक चंदा—१२ रु०

एक प्रति—३ रु०

विषयानुक्रमणिका

क्रमांक	लेख	पृष्ठ
	सम्पादकीय	(i)
1.	हिमाचल जन-जीवन पर गोरखा आक्रमण का प्रभाव —शक्ति सिंह चन्देल	1
2.	बिलासपुर-हमीरपुर क्षेत्र में प्रचलित लोक गाथाएं: एक अध्ययन —बी० आर० भारद्वाज	8
3.	कुल्लू जनपद में विवाह संस्कार सम्बन्धी शब्दों का सांस्कृतिक धरातल —चन्द्रशेखर बेबस	26
4.	पहाड़ी लोक महाभारत "पण्डमायण," में प्रयुक्त शब्दावली का समाज-शास्त्रीय अध्ययन —भुवनेश्वरी राठौड़	30
5.	कांगड़ा लोक-गीतों में गालियां —मनोहर लाल	46
6.	हिमाचल की हेला या बुआरा प्रथा —रवीन्द्र रण देव	57
7.	पहाड़ी चित्रकला में चम्बा कलम —हरिश्चन्द्र राय	59
8.	बिलासपुरी लोकगीतों में वेदना —पद्म नाभ गौतम	63
9.	हिमाचली में चीश-पाणी —श्याम कुमारी	73
10.	मेला जागरा —काहन सिंह जमाल	82
11.	हिमाचल के अज्ञात कवि वृजराज का कर्त्तृत्व परिचय —श्री कान्त प्रत्यूष गुलेरी	86
12.	विविधा— सांस्कृतिक समन्वय के उन्नायक बहुभाषाविद—खुसरो —विद्या शर्मा	95
13.	शब्द-श्री महिला के पर्यायवाची पहाड़ी शब्द	97

हिमाचल के जन-जीवन पर गोरखा आक्रमण का प्रभाव

—शक्ति सिंह चन्देल

गत शताब्दी हिमाचल प्रदेश की रियासतों के राजनैतिक जीवन में अनेक कारणों से महत्वपूर्ण है । गोरखों का इन रियासतों पर आक्रमण इस शताब्दी की सब से बड़ी घटना कही जा सकती है क्योंकि इस आक्रमण के कारण रियासतों के आपसी सम्बन्धों तथा आन्तरिक एवं बाह्य नीतियों में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए। यह आक्रमण क्षणिक अथवा अव्यवस्थित नहीं था बल्कि इसने यहां के जन-जीवन पर अमिट छाप छोड़ी है जिसका प्रभाव झेड़ों, बारों, लम्बे गीतों, कहानियों तथा बुझारथों के रूप में अद्यतन विद्यमान है । गोरखों के आक्रमण के सम्बन्ध में इतिहासकारों ने पर्याप्त प्रकाश डाला है परन्तु इन विवरणों में यत्र-तत्र बढ़ा-चढ़ा कर भी बातें कहीं गई हैं तथा विभिन्न स्थानों पर लड़े गए युद्धों के अनेक अंश इतिहास से अधिक अवदान (Legends) के रूप में प्रचलित हो गए हैं । वर्तमान लेख में इस सम्बन्ध में यथा तथ्य विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है ।

सन् 1765 ईस्वी में पृथ्वी नारायण शाह जो वर्तमान नैपाल की एक छोटी सी ठकुराई गोरखा (इस स्थान तथा वंश का नाम गुरू गोरखनाथ के साथ सम्बद्ध है) पर राज्य करता था, ने अपने समीपस्थ ठाकुरों पर अधिकार जमा लिया और स्वयं को उस क्षेत्र का अधिपति घोषित कर दिया बाद में इसी से नैपाल राज्य का उद्भव हुआ । उसके उत्तराधिकारियों ने नैपाल का राज्य अपने अधिकार में रखा और उत्तरोत्तर क्षेत्र-विस्तार के लिए अपने प्रयत्न जारी रखे । अट्ठारहवीं शताब्दी तक उन्होंने गढ़वाल और कुमाऊं के क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया । गोरखों के बढ़ते हुए प्रभाव को देखते हुए सन् 1801 ई० में अंग्रेज़ों ने उनके साथ एक समझौते पर हस्ताक्षर कर लिए जिसके अन्तर्गत अंग्रेज सरकार का एक प्रतिनिधि काठमाण्डू भेजा गया ।

गोरखा सरदार काजी अमर सिंह थापा का नाम गोरखों के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा । वह एक महत्त्वाकांक्षी तथा चतुर सेनापति था । पहाड़ी रियासतों में, जिन में विशेष रूप से सिरमौर, हिण्डूर (नालागढ़), कटोच (कांगड़ा) तथा कहलूर (बिलासपुर) के नाम उल्लेखनीय हैं, बारा ठकुराई (बारह छोटी रियासतों) के प्रभुत्व के सम्बन्ध में झगड़े चल रहे थे । ये रियासतें बड़ी रियासतों के आधिपत्य में थीं । परन्तु पर्याप्त समय से ये बिलासपुर से छूट कर सिरमौर रियासत के अधिकार में चली गई थीं । कांगड़ा के प्रभावशाली राजा संसार चन्द ने हिण्डूर के राजा राम सरन को बिलासपुर पर आक्रमण करने के लिये आमन्त्रित किया और यह शर्त रखी कि विजय की दशा में बारह

लेखकों से

—'सोमसी' में प्रकाशनार्थ पर्वतीय संस्कृति, कला एवं भाषा के विभिन्न पक्षों पर शोधपूर्ण लेख प्रकाशन समय से कम से कम तीन मास पूर्व प्राप्त होने चाहिएं।

—पूर्व प्रसारित अथवा अन्यत्र प्रकाशित सामग्री को उलटा-पलटा कर प्रकाशनार्थ न भेजें बल्कि मौलिक रचनाएं, जिनका सम्बन्ध जीवन के विभिन्न पक्षों से हो, प्रेषित करें।

—प्रकाशनार्थ स्वीकृत न होने पर कार्यालय द्वारा रचना को वापिस कर दिया जाता है। इसके लिए टिकट लगा लिफाफा भेजने की आवश्यकता नहीं है।

—सम्पादक

तो संसारचन्द ने कांगड़ा का किला, तारागढ़ और ज्वालाजी का कुआं गोरखों को देना स्वीकार किया तथा टिहरा और कांगड़ा का शेष भाग अपने पास रखने की शर्त रखी। परन्तु संसार चन्द ने धोखे से काम लिया, उसने दुर्ग से अपने परिवार तथा कोष को चुपके से निकाल लिया तथा किले का उत्तरदायित्व नोरंग पटवाल के हाथ दे कर स्वयं रणजीत सिंह से सम्पर्क स्थापित कर लिया तथा सहायता के बदले में उसे कांगड़ा का किला देने की पेशकश की।

उसने पठानकोट से अपनी सेना को गोरखों की सप्लाई लाइन काटने का आदेश दिया। इस प्रकार गोरखे निष्प्रभाव हो गए। रणजीत सिंह ने अगस्त, 1809 तक कांगड़ा दुर्ग पर अधिकार कर लिया। जब उसने दुर्ग पर अधिकार कर लिया तो काजी अमर सिंह थापा को अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ने के लिए एक समझौता का प्रस्ताव किया। रणजीत सिंह ने इसी वर्ष अप्रैल में अंग्रेजों के साथ भी एक समझौता किया था, इसी कारण काजी ने इस प्रस्ताव को अव्यावहारिक व दम्भ मान कर ठुकरा दिया। इसके कारण गोरखों व सिक्खों की फौजों की कांगड़ा किला के दक्षिण में गणेशघाट पर लड़ाई हुई। यहां सिक्खों को पीछे हटना पड़ा। उन्होंने दोबारा सेना का संगठन किया और गोरखों को कई स्थानों पर पराजय दी। अन्त में काजी ने रणजीत सिंह की सेना पर सीधा आक्रमण किया। काफी देर घमासान युद्ध चलता रहा और दोनों पक्षों में भारी जन-हानि हुई। अन्त में सिक्खों व गोरखों का समझौता हुआ जिसके अनुसार गोरखे सतलुज के पूर्व की ओर वापिस हो गए। किन्तु अमर सिंह थापा के मन में अभी भी यह इच्छा घर किए हुए थी कि सतलुज के पूर्व की ओर के क्षेत्र में अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के पश्चात वह कांगड़ा के दुर्ग पर दोबारा आक्रमण करेगा।

सन् 1809 ई० में जब काजी अमर सिंह थापा कांगड़ा से वापिस आया तो उसे अनुभव हुआ कि सिरमौर का राजा कर्म प्रकाश उसकी हार के कारण उसे महत्वपूर्ण नहीं मानता। अमर सिंह ने अपने पुत्र रणजोर सिंह को सिरमौर जीतने के लिए भेजा। कर्म प्रकाश भाग गया तथा नाहन और जोथक बिना लड़ाई के ही जीत लिए गए। हिण्डूर पर भी गोरखों का उसी वर्ष अधिकार हो गया। सन् 1810 ई० में जुब्बल पुण्डुर और बुशहर को भी जीत लिया गया। हाटू श्रृंखला के दुर्गों को अपने अधिकार में कर लिया गया। रामपुर के प्राचीन पुस्तकों के भण्डार को जला दिया गया। किन्नौर के कामरू स्थान तक पहुंचने का गोरखों का इरादा टापरी के पास छोल्तू नामक स्थान पर रात के आक्रमण ने विफल कर दिया। इतिहास साक्षी है कि कामरू में खजाना तथा राजा (जो उस समय शैशवावस्था में था) के होने के कारण गोरखों ने वहां जाने का निश्चय किया था। किन्नौर के लोक गीतों में इस घटना का वर्णन 'गोरखा बोइरिस' के गीत में मिलता है। एक गीत के अनुसार राजा, रानी व कोष चगांव गांव में छिपा कर रखे गए थे। गीत का कुछ अंश इस प्रकार है :—

जी मेशुरा शङ्करासा,	जै मेशुर शङ्कर,
राजा ता करई।	(हम) राजा को तो लाए।
राजा ता करई,	राजा तो लाए,

ठकुराई का प्रभुत्व हिण्डूर को दे दिया जाएगा तथा बिलासपुर व मण्डी के क्षेत्र कांगड़ा में मिला लिए जाएंगे । बिलासपुर के राजा महाचन्द (1778-1824ई०) की उन दिनों नालागढ़, कांगड़ा तथा आनन्दपुर के सोढियों के साथ अनबन चल रही थी तथा सिरमौर का राजा कर्म प्रकाश उसकी सहायता कर रहा था । दोनों राजाओं ने गोरखों को सहायता के लिए बुलाया और काजी अमर सिंह थापा ने एक हज़ार सिपाहियों की एक टुकड़ी सिरमौर व बिलासपुर के राजाओं की सहायता के लिए भेजी परन्तु कटोच राजा की शक्तिशाली फौज तथा हिण्डूर के राजा की सेना ने उन्हें हरा दिया । दूसरी बार के आक्रमण में काजी ने स्वयं सेना का नेतृत्व किया और पहाड़ी राजाओं की सेना पर विजय प्राप्त की । इस प्रकार गोरखों की सेना का लोहा इस क्षेत्र में जम गया । गोरखों ने सिरमौर के राजा की गद्दी बहाल कर दी तथा सतलुज के आस पास के अनेक दुर्गों को जीत लिया । थोड़े ही समय में बारह और अट्ठारह ठकुराइयों पर गोरखों का अधिकार हो गया । अमर सिंह थापा की विजय से प्रभावित हो कर बिलासपुर के राजा ने उसे नादौन के राजा के साथ झगड़े को सुलझाने के लिए आक्रमण हेतु आमन्त्रित किया । यह झगड़ा संसार चन्द द्वारा कहलूर के बाटी क्षेत्र (लदरौर के आसपास का क्षेत्र) पर अधिकार जताने के कारण चल रहा था । गोरखों ने निमन्त्रण को सहर्ष स्वीकार कर लिया और इस प्रकार कटोचों तथा गोरखों के मध्य मई, 1806, ई० में महल मोरी के स्थान पर टकराव हुआ जिसमें कांगड़ा की फौजें हार गईं और पीछे टिहरा-सुजानपुर हट गईं । गोरखों ने नादौन प्रवेश करते ही मण्डी के राजा, जो बारह वर्ष से कटोच राजा की कैद में था, मुक्त कराया इसके पश्चात् उन्होंने कांगड़ा के किला पर घेरा डाला तथा भक्ति थापा के नेतृत्व में टिहरा को जीतने के उद्देश्य से एक टुकड़ी भेजी इसी बीच हिण्डूर के राजा राम सरन ने अपने पलासी के किले से निकल कर स्वतन्त्रता प्राप्त करने तथा जीते हुए क्षेत्र को वापिस लेने का यत्न किया जिसके कारण प्रत्येक बार गोरखों को हिण्डूर वापिस लौटना पड़ा । इस कठिनाई को पार करने के लिए काजी ने काठमाण्डू से सहायता प्राप्त करने का यत्न किया । सन्देश पाकर नयन सिंह थापा के नेतृत्व में काठमाण्डू से सेना ने 500 मील की यात्रा पैदल तय की और सिरमौर तथा बारह-अट्ठारह ठकुराइयों को जीत कर कांगड़ा की सीमा में 1806 ई० में प्रवेश किया । अब भक्ति थापा, जिसके अधीन 12 कम्पनियां (लगभग 2,500 सैनिक) थीं ने अब टिहरा पर घेरा डाला । संसार चन्द ने घेरे को तोड़ने का यत्न किया परन्तु उसकी सेना हार गई । अन्त में सन् 1806 के सितम्बर-अक्तूबर में टिहरा को जीत लिया गया ।

कांगड़ा दुर्ग का घेरा तीन वर्ष तक चला । दुर्ग में सामग्री का अभाव होता जा रहा था । कांगड़ा की उपजाऊ घाटी म अराजकता का बोलबाला था, फसल का नामोनिशान नहीं था । गोरखों के सामने दुर्ग को जीतने की अनेक योजनाएं थीं जिनमें से एक नयन सिंह थापा द्वारा सम्मुख आक्रमण की भी थी । उसने अन्त में अपनी योजना के अनुसार कार्य किया और पराजय का मुंह देख कर दुर्ग के सामने वीरगति को प्राप्त हुआ । यह सन् 1808 ई० की घटना है । इसी वर्ष 15 दिसम्बर को लुधियाना में अख्तरलोनी को अमर सिंह थापा का एक पत्र मिला जिसमें लिखा था कि चार वर्षों में गोरखों को इस घेराव में करोड़ों रुपये का खर्च तथा भारी जन-हानि उठानी पड़ी थी तथा जब समझौता हुआ

पत्थर-कंकर प्राप्त हुए। गोरखों को क्रोध तो आया पर वे वापिस आने में सक्षम नहीं थे क्योंकि उन्हें मार्ग की बीहड़ता का पूर्ण आभास था।

सन् 1814 ई० में अंग्रेजों द्वारा गोरखों के विरुद्ध युद्ध करने की घोषणा किए जाने के बाद वज़ीर टिक्का दास तथा बद्रीदास ने गोरखा सरदार कीर्ति राणा, जिसके अधिकार में हाटू शृंखलायें थीं, के साथ युद्ध आरम्भ कर दिया। बाद में कुल्लू की सेना ने बुशहर की मदद की। कीर्ति राणा वापिस नहीं जा सका और उसे 'सुरू का टिब्बा' में रहना पड़ा। उसने इस शर्त पर आत्मसमर्पण किया कि उसकी सेना को समीपस्थ ब्रिटिश जनरल को सौंप दिया जाएगा। इसके बाद बुशहर की सेना ने रणजोर सिंह द्वारा अधिकृत क्षेत्र रायनगढ़ की ओर प्रस्थान किया।

सन् 1813 ई० में काज़ी अमर सिंह थापा ने हिंडूर के चार गांवों पर अधिकार किया था। ये बटाउलिग ताल्लुके में मैदानी क्षेत्र में पड़ते थे जिसका अधिकांश भाग पहाड़ी क्षेत्र में था। यद्यपि यह एक छोटी सी घटना थी परन्तु अंग्रेजों ने इसे 'सीमित सिद्धान्त' (Principal of Limitation) का गम्भीर उलंघन समझा और गवर्नर जनरल ने काठमाण्डू को लिखा कि वे श्री अमर सिंह थापा को आदेश दें कि वह मैदानी क्षेत्र के इन गांवों में हस्तक्षेप न करें[1]।

बाद के समय में दोनों पक्षों के सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण नहीं रहे। काठमाण्डू से सन् 1814 ई० में ब्रिटिश प्रतिनिधि वापिस बुला लिया गया। नेपाल की सेना द्वारा गोरखपुर पर आक्रमण किया गया तथा एक ब्रिटिश प्रतिनिधि को मार दिया गया। उस वर्ष के नवम्बर मास में मार्क्विस आफ् हेस्टिंग्ज ने नेपाल के साथ युद्ध की घोषणा कर दी।

चार टुकड़ियां आयोजित की गईं जिनमें से दो ने दक्षिण तथा दो ने मेरठ तथा लुधियाना से कार्य आरम्भ करना था। दक्षिण की ओर से आक्रमण करने वाली टुकड़ी गोरखों के साथ युद्ध में पराजित हो गई। अख़्तर लोनी ने लुधियाना से अपनी सेना के साथ शिमला के पश्चिम की ओर की पहाड़ियों में प्रस्थान करके अन्ततः स्थिति में कुछ सुधार किया। उसने पहले ही दिल्ली से अधिक सैनिक सहायता तथा बड़ी तोपों के लिए लिख दिया था जिसके कारण आक्रमण फरवरी, 1815 ई० तक बिलम्बित किया गया और

"......Since the question must turn out the local position of the villages, namely, whether they are situated on the hill, and not on their having formed a portion of any particular Talook. Colonel Ochterlony has accordingly been instructed after ascertaining that the four villages are as, there is no reason to doubt, situated below the hills, to take the necessary measures for defending them against any attempt to disposess the proprietor Raja Ram Singh. I have Communicated these particulars in the firm expectation that you will issue positive order to Amar Singh Thapa to desist from his attempt. On these villages, and to abstain Carefully in future from any interference in the Countries below the hills. By strict attention on both sides to the Principal, above stated, no room will be afforded for misunderstanding or dispute."

बासो हम रानतोईं ?	बास कहां देंगे ?
बासो ता ले लन्नरई,	वास (निवास) तो दें,
सीला चो याशङ्,	नमीदार याशङ् में,
सीला चो याशंङ्	नमीदार याशङ् में,
दाम्यासो गोरे।	दाम्यास के घर में ।
बासो ता रानोई,	बास तो दिया,
सिरकोठ हम रानतोईं।	भगवती के ठहरने का स्थान कहां दें ?
शिरकोठ ता लान्यारीं,	देवी का वास करना,
छोल्टा हो गोरे।	छोल्टा के घर पर ।
शिरकोठ ता रानोई	शिरकोठ तो दिया,
खजाना हाम ता तोईं ?	खजाना कहां रखेंगे ।
खजाना ता लोन्ना,	खजाना कहे तो,
भाटो गोरे।	भाट के घर पर—
जी मेशुरा शङ्कासा,	जय मेशुर शङ्कर ।
घोड़ा हाम ता तोईं ?	अस्तबल कहां रखेंगे ?
घोड़ा ता लोन्ना,	घोड़ा कहें तो,
दोरों चमराल्याङ् ।	कोने में चमरालिङ् में ।
दारो चमरालिङ्,	कोने में चमरालिङ्,
बोङ् खोलो गोरे।	बोङ्खोर (कोली) के घर पर ।
जी मेशुरा शङ्करासा,	जय महेशुर शङ्कर,
बदाया लोशो ,	आया, कहते हैं,
गोरखा बोइरिस, गोरखा बोईरिस ।	गोरखा वैरी ।
कटान दो लोशो,	कटा हुआ, कहते हैं,
लूरी छाम ।	लूरी का पुल ।
दो कटान दो लागी,	वह, काटने लगे हैं,
वाङ्तू जाङ्छाम ।	वाङ्तू का पुल ।
कालामो ल्याम्योश	काला मुहं कराया,
खेर्या र्या फी ग्योश ।	दौड़ा दौड़ा कर ले गए ।
क्यारया र्या ठण्डा सरानङ्,	दौड़ा दौड़ा कर ठण्डे सराहन में,
निङ् जान वचाईं,	हमारी जान बचाएं,
निङ्हथियार कीनू ।	हमारे हथियार आपको ।"
शुम बोर्षाङ् दरबार	तीन वर्ष दरबार,
चगांव देशाङो ।	चगांव गांव में ।

किन्नर लोक गीतों के अनुसार चगांव महेशुर के चमत्कार के कारण गोरखों को वापिस जाना पड़ा था। एक अन्य कहानी के अनुसार फतेहराम वजीर ने बड़े बड़े ताले लगे हुए सन्दूक छोल्टू के स्थान पर गोरखों के हवाले किए और बताया कि इन में रियासत की धन दौलत सुरक्षित है। उसने यह बताया कि वह जल्दी में चाबियां लाना भूल गया है। गोरखों ने विश्वास किया और सन्दूकों को रामपुर ले गए वहां खोलने पर उन्हें उनसे केवल

परिश्रम तथा प्रसन्न करने की भावना' के कारण जनरल अख्तर लोनी ने इन की एक नसीरी (मित्रतापूर्ण) पल्टन बनाई तथा वह स्वयं इसका कमाण्डैण्ट तथा संरक्षक बना। बाद में इसी का नाम 'फर्स्ट गोरखा राइफल' हो गया।

मलौण के घेरे के प्रभाव अब दृष्टिगोचर होने लग गए थे। यह दुर्ग समुद्र तल से साढ़े चार हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित है। गम्भरोला खड्ड से इसकी ऊंचाई दो हज़ार फुट है। अख्तर लोनी ने मलौण के सामने देओंथल में अपनी स्थिति बनाई। मलौण पर योजनानुसार तीन भिन्न भिन्न रास्तों से सेना का हमला तय किया गया। इनमें से दो गम्भरोला वादी से तथा तीसरा रतनपुर से। इन सारी सेना की टुकड़ियों को मलौण के पूर्वी भाग में रैला शिखर पर पहुंचना था। सारी पैदल सेना तथा युद्ध सामग्री को लाकर अवस्थित किया गया था। यह क्षण जब कि मलौण पर बमबारी होने को थी, अमर सिंह थापा के लिए परीक्षा की घड़ी थी। इसी समय प्रसिद्ध तथा वीर कमाण्डर भक्ति थापा ने अंग्रेज़ों के कैम्प पर आक्रमण किया परन्तु यह व्यर्थ साबित हुआ। अख्तरलोनी की तोपों के गोलों से तथा आमने सामने के युद्ध में भक्ति थापा वीरगति को प्राप्त हुआ। उसके शरीर को शालों से ढक कर मलौण दुर्ग में भेज दिया गया। अंग्रेज़ों के साथ इस युद्ध में गोरखों की आधी सेना समाप्त हो गई तथा अनेक सिपाही उन्हें छोड़ कर भाग गए। इसके कारण अन्त में अमर सिंह थापा को हथियार डालने पड़े।

15 मई, 1815 ई० में हथियार डालने के उपरान्त काज़ी अमर सिंह थापा तथा उसके पुत्र रणजोर सिंह को, उनकी वीरता, हुनर तथा वफादारी के कारण पूरे सम्मान, तमगों, हथियारों आदि तथा कुछ सैनिकों के साथ निकल जाने की आज्ञा दे दी गई।

गोरखों के इस युद्ध ने हमारे प्रदेश में दूरगामी प्रभाव छोड़े और यह सम्भवतः प्रथम बार था कि पहाड़ी राजाओं का रुझान अंग्रेज़ों की ओर हुआ। अंग्रेज़ों ने इस घटना का भी भरपूर लाभ उठाया परन्तु जनता के मानस में गोरखों का आतंक पर्याप्त समय तक बना रहा। यही कारण है कि अब भी अनेक क्षेत्रों में गोरखों के इस आक्रमण के सम्बन्ध में लोकगीत प्रचलित है तथा गोरखों को हिमाचल अपने घर की तरह लगता है। सम्भवतः हिमाचल प्रदेश की भूमि पर लड़ा गया यह सब से बड़ा युद्ध था।

होमगार्डज़,
शिमला-2.

इस बीच उसकी सेना की संख्या दस हजार से भी अधिक हो गई । साथ ही उसकी सेना भारी तोपों से भी लैस हो गई ।

अख्तर लोनी की सेना हिण्डूर की मैदानी राजधानी पलासी में पहुंची । यह 31 अक्तूबर, 1814 ई० का दिन था । दो नवम्बर को अरकी जाने वाले मार्ग से उसने सेना सहित प्रस्थान किया और नालागढ़ के किले में प्रथम बार गोरखों के साथ युद्ध किया । अट्ठारह पौण्ड गोले बरसाने वाली तोपों ने पहाड़ों को कम्पायमान कर दिया । 5 नवम्बर की प्रातः तक गोरखों ने हथियार डाल दिये । इससे एक दिन पूर्व अमर सिंह थापा ने अरकी तथा इसके साथ के महत्वपूर्ण स्थान सबाठू को खाली कर दिया था तथा वह बिलासपुर के अपने सहायकों के अतिरिक्त 3,000 सैनिकों के साथ रामगढ़ की ओर प्रस्थान कर गया । अख्तर लोनी ने रामगढ़ में गोरखों का मुकाबला करने के लिए नोरी के स्थान पर सेना को एकत्रित किया । यहां घमासान युद्ध हुए परन्तु सफलता मेजर जनरल के हाथ न लग सकी । यद्यपि अमर सिंह का घेराव तीन ओर से किया गया था परन्तु उसे उत्तर की ओर से बिलासपुर के राजा महाचन्द के द्वारा आवश्यक साधन जुटाए जा रहे थे । अख्तर लोनी ने व्यर्थ में यह आशा की थी कि कांगड़ा का राजा संसार चन्द बिलासपुर पर आक्रमण करेगा । संसार चन्द के आयर लैण्ड वासी मिलिटरी कमाण्डर 'ओ ब्रीयन' ने राजा के 1500 सैनिकों के साथ (अंग्रेजों से) मिल जाने की पेशकश की परन्तु अख्तर लोनी ने हेस्टिंग्ज के आदेशानुसार इस अपरिचित क्षेत्र में बिना किसी की सहायता प्राप्त किए ही लड़ने का निर्णय किया । पूरे दिसम्बर भर में कोई विशेष घटना नहीं हुई । सर्दी कड़ाके की पड़ रही थी तथा पहाड़ों में धुन्ध का साम्राज्य था । अन्त म, दिसम्बर के तृतीय सप्ताह में सिपाहियों की एक बटालियन सैन्य-सामग्री के साथ कानपुर से पहुंची । अख्तर लोनी ने अब मांगू किले के अधिकार की तैयारी की । यह किला रामगढ़ से चार मील की दूरी पर है । खुखरियों तथा तलवारों की इस घमासान लड़ाई में अनेक हताहत हुए परन्तु विशेष परिणाम नहीं निकला ।

अख्तर लोनी ने युद्ध की एक नई तरकीब निकाली । उसने अमर सिंह थापा को पहाड़ियों में स्थित मलौण दुर्ग के आसपास अपनी सेना को इकट्ठा करने के लिए मजबूर करने की बात सोची । 16 जनवरी को योजना पर कार्य आरम्भ हुआ । उसने गम्भर खड्ड को मोरी के स्थान पर पार किया तथा गम्भरोला घाटी में प्रवेश करके बड़ोग गांव में, जो मलौण के दुर्ग के ठीक सामने है, डेरा डाला। लैफ्टिनैण्ट रौस ने हिण्डूर के 2000 सहायकों के साथ बन्दला धार पर बिलासपुर शहर के ऊपर अधिकार किया । इसी बीच सेना की जो टुकड़ी मांगू किले पर अधिकार के लिए भेजी गई थी, ने 18 जनवरी के दिन उस पर अधिकार कर लिया तथा इससे एक दिन पहले अर्थात् 17 जनवरी को रामगढ़ पर भी अधिकार हो गया।

राजा महाचन्द ने, जो अब तक गोरखों का समर्थक था, अपना रुख अख्तर लोनी की ओर बदल लिया और वह ईस्ट इण्डिया कम्पनी का भक्त बन गया । इस प्रकार बिलासपुर पर जो अमर सिंह थापा के लिए सप्लाई का मुख्य स्रोत था, आश्रित रहना गोरखों के लिए सम्भव नहीं रहा तथा बिलासपुर के 1,000 सहायक भी उन से छिन गए । यही नहीं, गोरखों के अपने आदमियों ने भी उन्हें छोड़ना आरम्भ कर दिया तथा अप्रैल तक ऐसे लोगों की संख्या लगभग 324 हो गई । इन लोगों के 'हंसमुख स्वभाव,

सोमसी

दूसरे को समझने लगे और एक दूसरे में अपनत्व अनुभव करने लगे। पहाड़ी भाषा पर बहु-मुखी योजनाओं द्वारा कार्य आरम्भ किया जाने लगा। इसी क्रम में प्रदेश में प्रचलित विभिन्न प्रकार की वीरगाथाओं यानी झेड़े और हारों का संकलन और संग्रहण का कार्य भी सुचारू ढंग से होने लगा है। ये कथाएं न केवल सांस्कृतिक और साहित्यक क्षेत्र में विशेष महत्व रखती हैं वरण प्रदेश के इतिहास पर भी यथार्थ प्रकाश डालती।

1 नूर पुरे रा राजा जगता :

आप के सम्मुख मैं सर्वप्रथम, "नूर पुरे रा राजा जगता" के झेड़े के सम्बन्ध में सांस्कृतिक तथ्य रखने लगा हूं—कथा इस प्रकार है कि राजा जगता पठानिया वंश से सम्बन्धित श्री तारा चन्द का पौत्र तथा श्री कर्म चन्द का पुत्र, ज़िला कांगड़ा में उत्पन्न हुआ था। सिंहासन पर आरूढ़ होते ही उसने चमत्कार दिखाने आरम्भ कर दिए थे। क्योंकि आरम्भ में ही गायक गाते हैं—

"पूरेयां रा दित्ती रा था
पूरिया घड़िया,
राजा जगता जमेया,
नूर पुरे राज कमाया"।

उक्त चौपाई से स्पष्ट प्रतीत होता है कि राजा जगता वरदान-वश उत्पन्न हुआ था अर्थात् "पूरेया रा दित्ती रा" उन महान आत्माओं या सन्तों के वरदान से उत्पन्न हुआ था जो अध्यात्मिकता में पहुंचे हुए थे। सम्भवतः इन का जन्म भी नूरपुर में ही हुआ हो।

चौपाई संख्या तीन में "भागां दा वली होणा" लोकोक्ति आई है जिस का अर्थ है पिछले जन्म के सुकर्मों के कारण वह बाल्यावस्था में ही भाग्यवान था। इसी चौपाई में "पैरा तेरे राजा चक्कर" शब्द आया है जिस का अर्थ है कि जिस मनुष्य के तलवे में कोई विशेष चक्कर का चिन्ह हो वह बड़ा भाग्यशाली अथवा सम्राट समझा जाता है। इसी चौपाई की तीसरी पंक्ति में" "मत्थे नागण आई" है जिस का अर्थ है किसी मनुष्य के माथे पर शुभ सूचक रेखा का दृष्टि गोचर होना। और चौथी पंक्ति में "राजा तेरी बड़ी कमाई" है जिस का अर्थ है कि हे राजा आप ने अपने पूर्व जन्म में बड़ी अच्छी कमाई की है। पूरी चौपाई इस प्रकार है:—

भागां रा हैं तू बली,
पैरां तेरे राजा चक्कर।
मत्थे नागण आई,
राजा तेरी बड़ी कमाई।

झेड़े की चौथी चौपाई की चौथी पंक्ति में "जगता आकिया होया" का अर्थ है राजा जगत पठानिया बहुत प्रसिद्ध हो गया।

बिलासपुर–हमीरपुर क्षेत्र में प्रचलित लोक गाथाएं–एक अध्ययन

–बी0 आर0 भारद्वाज

किसी भी देश, प्रदेश, गांव अथवा व्यक्ति को अपना भविष्य उज्जवल करने में, अपने भूत काल में घटित घटनाओं का, अपनी संस्कृति का अथवा इतिहास का महत्त्वपूर्ण योगदान मिलता है। इस प्रदेश में एक कहावत प्रचलित है "नंगे भुक्खै जिन्हीं कटेया बचपण, बड्डे होई फेरी नण काह् तरसण" —जिस मनुष्य ने अपने बचपन में बुरे दिन देखे हों वह बड़ा होकर अपना जीवन सुख पूर्वक व्यतीत करता है, उस की आंखें किसी भी चीज को नहीं तरसतीं वह अपने बाहु-बल से सब कुछ उत्पन्न कर सकता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि भूत काल में खाई हुई ठोकरों के आधार पर ही कोई मनुष्य अथवा समाज अपने मनोबल को उन्नति के पथ पर अग्रसर कर पाता है। माननीय पंडित जवाहर लाल जी नेहरू अंग्रेजी में लिखे लेख "जब महात्मा गांधी आए" में लिखते हैं कि जब वह झरिया में कोयले की खानों में भारतीय मजदूरों की दशा देखने गए तो वहां पर कार्य-रत स्त्रियों की दशा को देख कर उन का सिर चकराने लग पड़ा था। उसी ठोकर के परिणाम-स्वरूप आज भारतीय स्त्री समाज का संसार भर में एक गौरव-मय स्थान है। इसी प्रकार हिमाचल प्रदेश पिछली कई सदियों से कुछ ऐसे दौर में से गुजर कर आया है कि हम लोगों को अपने से ही घृणा होने लग पड़ी थी। हमारी (हिमाचल की) संस्कृति मृत-प्राय: हो चली थी, क्रमबद्ध इतिहास का नितान्त अभाव है। यहां का एक मनुष्य दस मील की दूरी पर रहने वाले मनुष्य को विदेशी समझने लग पड़ा था। यही कारण है कि हिमाचल प्रदेश भाषा की दृष्टि से किसी भी स्थान पर स्थिर नहीं रह सका।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में यहां की भाषा में यद्यपि अपनत्व था परन्तु भिन्नता पराकाष्ठा पर पहुंची हुई थी। यहां तक कि एक गांव की भाषा साथ के पड़ोसी गांव की भाषा से भिन्न होती थी। परन्तु भारत स्वतन्त्र होते ही भारत सरकार ने रियासतों के अस्तित्व को समाप्त किया और इसी अधिनियम के आधार पर यहां पर कुछ रियासतों को मिला कर एक संघ बनाया और उस संघ का नाम हिमाचल प्रदेश पड़ा। इस संघ (प्रदेश) के बन जाने पर, राजाओं का दबाव खतम होते ही प्रदेश के लोगों ने थोड़ा बाहर झांक कर देखा तो अपने से खिन्न हो गए। अपनी संस्कृति और अपनी भाषा से एक दम हम लोग निराश हो उठे। परन्तु इस प्रदेश के वयोवृद्ध दूरदर्शकों, विशेष कर माननीय डा0 यशवंत सिंह जी परमार, तथा मान्यवर लाल चन्द प्रार्थी जी आदि के सद् प्रयत्नों से इस प्रदेश की संस्कृति और भाषा को आश्रय मिला और भाषा तथा सांस्कृतिक प्रकरण विभाग का प्रादुर्भाव हुआ। विभाग द्वारा व्यवहृत अनेक योजनाओं द्वारा पहाड़ी भाषा को प्रकाश में ला कर हम एक

ओ जी मरो जायां तू मेघेया,
धोइया तें मेरी चुगली लाई।।
ओ जो तू एथी जमेया एथी पलेया,
अज्ज में कने तें धरो कमाया।

राजा चुगली लगाने वाले को सम्बोधित करते हुए कहता है कि तू इसी देश में जन्मा है और यहां का अन्न खा कर इतना बड़ा हुआ है। परन्तु इतना होते हुए भी तूने आज देशद्रोही का काम करके अच्छा नहीं किया। इस में 'धो' शब्द द्रोह का तद्भव है। अगली चौपाई की पहली लाइन में "धोगा दोगा" बड़े पुराने शब्द प्रतीत होते हैं जिन का अर्थ है छोटे-बड़े, और जवान-बूढ़े। इसी चौपाई की तीसरी पंक्ति "ओ जो चारों पासे धम्मा पइयां" आए हैं। धम्मा ठेठ पहाड़ी का शब्द है जिस का अभिप्राय उस महिमा से है जिस को सर्वोपरि समझा जाए। चौपाई इस प्रकार है :—

ओ जी धोगा दोगा कट्ठा कीता,
रक्खी फौज बणाई।
ओ जी चारों पासें धम्मां पइयां,
चलो लड़ाइयां जो भाई।

दसवीं चौपाई की दूसरी पंक्ति में "बापुए खट्टी" पहाड़ी का विशुद्ध शब्द है। इन का अर्थ है पिता द्वारा संचित सम्पत्ति। चौपाई संख्या ग्यारह में जब राजा जगत पठानिया अपनी सेना तैयार कर लेता है तो सभी को सम्बोधित करके कहता है कि जिस भी मनुष्य (सैनिक) को अपनी माता, नारी या घर से किसी भी प्रकार का मोह हो वह बिना किसी हिचकिचाहट के अपने घर जा सकता है अर्थात् किसी से कोई काम अनिच्छा से नहीं करवाया जाएगा। यह बात लोकतन्त्र प्रणाली की प्रतीक है। चौपाई इस प्रकार है—

ओ जी इकना री तो प्यारी बुड्डी माईयां,
इकनां री चंचल नारीं।
ओ प्यारी जिना जो भाईयो घरा दी
नारीं, घरें-ई रहो भाईयो।

तत्पश्चात् 15वीं चौपाई तक कहानी साधारण बोल-चाल की भाषा में चलती है। राजा जगत पठानिया अपने दल-बल को लेकर, पर्वत नदियों को पार करता हुआ देहली पहुंच जाता है। वहां पर नली बादशाह की रानियां महलों की छतों पर बैठ कर पहाड़ी सेना को देखती हैं। उन में से एक रानी ने व्यंग्यात्मक ढंग से ताना मारा और कहा कि हमारा नौकर (पहाड़ी राजा) आ गया है। यह बात राजा जगत पठानिया के गुप्तचर ने सुन ली और जाकर अपने राजा को सुना दी। इस बात को सुन कर राजा पठानिया कहता है :—

उक्त चार चौपाइयों में राजा जगता पठानिया की बंशावली तथा उस की प्रसिद्धि का वर्णन है और उस की प्रसिद्धि को देख कर उस के किसी शत्रु ने देहली के बादशाह नली को सचेत कर दिया ।

कोई भी मनुष्य स्वाभावानुसार, विशेष कर अपने बराबर के दूसरे मनुष्य की उन्नति नहीं देख सकता । इस लिए नली बादशाह राजा जगता पठानिया को एक पत्र भेजता है—जिसे इस प्रकार गाया जाता है :—

लिखे परवाने नली बाछाए,
देणे राजे जगते तांई ।
इन्हा लिखियां राजा जगता बचदा,
क्या घलेया फरमाई ।

इस पंक्ति में परवाने शुद्ध उर्दू का शब्द है, जब कि तांई में हमें पूर्णरूपेण अपनत्व झलकता है । इस चौपाई की अन्तिम दो लाइनों में "वाचदा" शब्द वाचना से बना है, "घलेया" विशुद्ध पहाड़ी शब्द है, और फरमाई 'फरमाना' उर्दू शब्द से बना है । उक्त शब्दों के अर्थ इस प्रकार हैं : वाचदा—पढ़ता है, घलेया-भेजा और फरमाई का अर्थ फरमाना अथवा कहना है। उक्त चौपाई से ऐसा प्रतीत होता है कि इस झेड़े का प्रादुर्भाव भारत में मुसलमानी राज्य स्थापित होने के उपरान्त हुआ होगा अथवा समय-समय पर गायकों द्वारा गाथा के शब्दों में फेर बदल लाया जाता रहा होगा क्योंकि इन का लिखित रूप उपलब्ध न होने के कारण शब्दों में फेर-बदल होना स्वाभाविक ही है ।

मैं सुणेया पहाड़ां च इक,
आकिया होया जगता ।
जे तू कहिए पहाड़ां रा राजा,
तां मिलेयां बराबर आई ।

उक्त चौपाई की दूसरी पंक्ति में "आकिया" शब्द आया है जिस का अर्थ है—प्रसिद्ध होना । इसी चौपाई की अन्तिम पंक्ति में लोकोक्ति—"मिलेयां बराबर आई"। इस क्षेत्र की प्रसिद्ध लोकोक्ति है । इस का अर्थ है मुकाबले में आना, कन्धे से कन्धा मिलाना । बराबर अथवा कन्धे से कन्धा मिलाना ठीक इसी प्रकार से है जैसे हल में जुते हुए बैल होते हैं । इन में जिस बैल को थोड़ा भी ज्यादा जोर हो तो वह दूसरे यानी कमजोर बैल से कुछ आगे ही रहता है, यानी दूसरे बैल को दबाता रहता है ।

झेड़े की सातवीं चौपाई की दूसरी पंक्ति में "लोऊएं हाखीं छाइयां" बड़ी प्रसिद्ध लोकोक्ति है । इस का तात्पर्य आखों में खून उतरना यानी अत्यधिक क्रोधित होना है । आठवीं चौपाई में राजा जगता पठानिया नली बादशाह से चुगली लगाने वाले मेघे को कोसता है । इस चौपाई की तीसरी तथा चौथी लाइन में देशद्रोही का वर्णन बड़े ही मार्मिक शब्दों द्वारा किया गया है जैसे—

गायकों द्वारा कहलवाए गए हैं । यहां पर गायक यह भी कहते हैं कि सोने चांदी के हथियारों वाली राजा जगत पठानिया की सेना के सामने गोला बारूद से लड़ने वाली काबुल के बाईस टिक्कों की सेना नहीं ठहर सकी ।

चौपाई संख्या अट्ठाईस और उन्तीस में युद्ध के पश्चात् पठानिया सेनाओं ने अपने डेरे लगा लिए परन्तु अपनी असीम सफलता के गर्व से राजा पठानिया फूला न समा सका और आकाश की ओर बादलों को निहारता हुआ इन्द्र देवता को भी तुच्छ समझने लगा ——

हकं इंदर आ जगता बोलेया,
खड़ी कुण सकांह सामणे मेरे ।
इंदर कोपेया, हयूंएं बेलणी,
जगत फौजां मुकाणे लाइयां ।

परन्तु भगवान किसी के अभिमान को स्वीकार नहीं करता । रात को बादलों का प्रकोप बढ़ा, बर्फ पड़नी आरम्भ हो गई और इतनी पड़ी कि सम्भवतः इस युद्ध के समाचार को सुनाने वाले के अतिरिक्त और कोई नहीं बच पाया हो ।

प्रस्तुत गाथा में सत्यता किस सीमा तक है, कुछ कहा नहीं जा सकता, परन्तु ऋतु की खराबी, दैवी शक्ति का प्रकोप मानना हिमाचल की पुरानी संस्कृति का साक्षात्कार है । इस गाथा में आगे आए शब्द जुद्ध-युद्ध, मुकाणा-समाप्त करना, गब्बे-बीच में, कोपेया-क्रोध किया, इन्दरा जो अरखा चलाणा-इन्द्र को ललकारना, हियूंए बेलण चलाई-अत्यधिक गति से बर्फ पड़ना, चींडां-चीखें, दबेया-दब गया, कुण-कौन, रच्छा-रक्षा और ढुकणा-समीप आना हिमाचल के ठेठ, विशुद्ध सांस्कृतिक शब्द हैं, फिर भी यदा-कदा उर्दू के शब्द वर्णित गाथा में जैसे लसकर-लश्कर, सिपाही-सैनिक, फौज आदि आए हैं ।

2 गढ़ मलौणा रा :

इस गाथा में भी वीर रस से ओत-प्रोत बिलासपुर और हंडूर (नालागढ़) की सेनाओं के मध्य युद्ध का वर्णन है । इस में जहां कहलूरी सेनाओं की वीरता का उत्साहवर्द्धक चित्र प्रस्तुत किया गया है वहां मीयां पम्मा नड्डा का देश-द्रोही बनना और इस नीच कार्य का फल भुगतना जनता के लिए एक सीख के रूप में सामने रखा गया है ।

प्रस्तुत गाथा की कथा इस प्रकार आरम्भ होती है कि वह कहलूर और हंडूर की सीमा पर स्वारघाट के समीप एक पर्वत शिखर पर नालागढ़ के राजा ने एक किला तैयार करवा लिया । जिस समय किले पर सफेदी की गई तो उसे सूर्य की पहली किरण से चमकता हुआ सब से पहले बिलासपुर की रानी श्रीमति बादलां ने देखा । गाथा में हिमाचली संस्कृति, लोकोक्तियां देखते ही बनती हैं जैसे गाथा का पहला ही शब्द "क:ल़ा" कलह का तद्भव रूप बन कर विशुद्ध हिमाचली-शब्द बन गया है ।

रोलें आई राजा बोलया,
ओ जी हऊं जे महाराजा
राजा जगत पठानिया,
बौणी रियां बटगा पछाड़ियां जो हां ।

कहने का अभिप्राय है कि इस प्रदेश की आन-बान किसी से कम नहीं रही है । राजा जगत पठानिया अपनी इज्जत के विरुद्ध इस घाव को सहन नहीं कर सका और उस ने उसी समय सौगन्ध खाई कि हम इतनी बहादुरी से लड़ेंगे कि इन रानियों को बन्दी बना कर इन के बालों की रस्सियां बनवा कर घोड़ों की पछाड़ियां (वह रस्सी जिस से घोड़े की पिछली टांग खूंटे से बांध दी जाती है) बनवाऊंगा ।

चौपाई सं0 अट्ठारह की अन्तिम पंक्ति "इक्को-ई पासणा देणा डुआई" में पासणा शब्द बड़ा पुराना प्रतीत होता है जिस का अर्थ है "धावा" तथा "देणा डुआई" वर्तमान पहाड़ी शब्द हैं जिन का अर्थ है–उड़ा देना । उन्नीसवीं चौपाई में दोनों राजाओं के मध्य युद्ध होता है परन्तु बीसवीं चौपाई में स्पष्ट दिखाई देता है कि नली बादशाह अपनी हार मान लेता है और नली बादशाह द्वारा पठानिया की बड़ाई करते हुए यह दर्शाया गया है कि राजा जगत पठानिया कुछ कुरूप था जैसे—

ओ जी तां जे रूप था वण्डेया करतारे
तां तू था गई रा किति ।
ओ जी तां रूप था वण्डेया करतारे,
तां हऊं था गई रा अक्ल घरा ।

चौपाई संख्या इक्कीस में गायक नली बादशाह से यह कहलवाते हैं कि राजा जगत पठानिया जैसा सूरमा अपने समीप रखना किसी भी समय हानिकारक सिद्ध हो सकता है । इस लिए इसे (पठानिया को) किसी भी भांति मरवा देना उचित होगा । इस के लिए उस ने एक योजना बनाई और पठानिया से प्रार्थना की कि हिन्दुस्तान को काबुल के बादशाह से सदा भय बना रहता है और उन की शक्ति को क्षीण करने वाले केवल आप ही हैं (नली बादशाह का विचार था कि पठानिया यदि काबुल के बादशाह से लड़ेगा तो वह अवश्य ही मारा जाएगा) । यह बात हिमाचल-निवासियों की बहादुरी को चार चांद लगा देती है परन्तु साथ ही साथ नली बादशाह की कूट-नीति और राजा पठानिया की अदूरदर्शिता स्पष्ट झलकती है । पठानिया की अत्यधिक प्रशंसा करते हुए राजा नली ने कहा कि कृपया आप इच्छा अनुसार धन बटोर कर काबुल जाएं और उसे समाप्त करें । गायकों का कहना है कि राजा जगत पठानिया और उसकी सेनाओं ने मन-चाहा सोना चांदी लिया और काबुल की ओर चल दिए ।

काबुल जा कर भी पठानिया अपनी फौजों को बहादुरी से लड़ने का आग्रह करता है । हां, यहां आकर यानी चौपाई सं0 पच्चीस में राजा पठानिया के मुख से इस धरती की संस्कृति को जीवित रखने वाले शब्द "ओए असां जो आणा प्यारा भाई"

कि बात गढ़ मलौण की ही है । इसी के उत्तर में झेड़े की छटी चौपाई में राजा कहता है:—

-ओ एड़े बोल न बोल मेरी राणिए,
बोल रही जांदे पर सिर जांदे ।
मुड़ी ने सिर नी धड़ा ने लगदे,
पर राणिग्रां जो चैन न औबे ।

रानी की बात को सुन कर राजा आग-बबूला हो गया परन्तु अपनी निर्बलता को छुपाने हेतु रानी को बड़े सुन्दर ढंग से कहता है कि हे रानी! तुम्हें ऐसे शब्द नहीं कहने चाहियें । यदि तुम्हारे शब्दों अनुसार कार्य किया जाए तो न जाने कितनी जानें सदा के लिये मृत्यु की गोद में सो जायें परन्तु तुम्हारे शब्द फिर भी मेरे हृदय में खटकते रहेंगे क्योंकि सफलता प्राप्त करना काफी कठिन कार्य होता है । इतना समझाने पर भी तिरिया हठ, राजा के उत्तर से रानी सन्तुष्ट नहीं हो पाई और राजा को आगे पग बढ़ाने पर विवश होना पड़ा ।

ए सदाये राजे पंडत पुग्रादे,
लाया समूत कितनी गनाणे ।
ए समूत राजे भाईयो सज अव्वल,
सराजे पम्मा बजीर बणाये ।

उक्त चौपाई के आधार पर हिमाचल का सांस्कृतिक पक्ष और भी उभर कर हमारे सामने आता है अर्थात् कोई क्रियात्मक पग उठाने से पहले राजा अपने पुरोहितों को बुला कर पूछता है कि हंडूर पर आक्रमण करने के लिए सेना का मुख्य किस आदमी को बनाया जाए, किस के नाम का मुहूर्त निकलता है । पुरोहितों ने अपने ज्योतिष के अनुसार पम्मे का नाम सुझाया । आठवीं चौपाई में राजा पम्मे को आज्ञा देता है कि तुम्हें अपने देश से लगती हंडूरी सीमा का निरीक्षण करना होगा और सभी किलों को प्राप्त करने हेतु युद्ध करना होगा । यहां पर सांस्कृतिक शब्द पुग्रादा-पंडित ज्योतिष लगाने वाला, समूत-ठेठ पहाड़ी शब्द अभिप्राय मुहूर्त, बन्ना-सीमा इन चौपाइयों में अपना विशेष स्थान रखते हैं ।

चौपाई संख्या नौ में साधारणतया पम्मे द्वारा युद्ध लड़ने हेतु सामग्री तथा अच्छे सैनिकों की मांग की गई है । हां इस में न्यूग्रा शब्द यहां के अपनत्व को प्रकट करता है जिस का अर्थ नम्रता पूर्वक, आदर पूर्वक है ।

दसवीं चौपाई में "अस्त" शब्द समाप्त होने के लिए आया है । अगली चौपाई में उन बहादुर राजपूतों के नाम बताए गए हैं जिन्हें पम्मे ने इस महीम के लिए चुना है । बारहवीं चौपाई में पम्मा अपनी सेना सहित हंडूर की ओर प्रस्थान कर जाता है । तेरहवीं चौदहवीं में सैनिकों द्वारा असीम उत्साह दर्शाया गया है । वे रात को भी

दूसरी चौपाई की पहली तथा दूसरी पंक्ति में देखिए कितनी बे-जोड़ उपमाएं दी गई हैं—

कःला छोड़ियां अन्दर हंडूरे,
लाया गढ़ मलौण बनाणे।
गढ़ तैयार होई गया था,
कली चूना गढ़ा पर ढाल्या।
तारा जेआ आई चमकेया,
तां जे सूरजा री रेसम चढ़ी।
तां गढ़ा रा चमकारा,
बिलासपुरा पुजेया आई।

द्वितीय चौपाई की प्रथम तथा दूसरी पंक्ति में सूर्य की पहली किरण के साथ सफेदी युक्त किला चमकता हुआ ऐसा नजर आया जैसे मेघ-युक्त आकाश में कोई तारा।

राणी बादला बैठी री छज्जे,
तां चमकारा छातिया सामणे आया।
राजा फिरदा बागां मंझ,
पर दिल किती होर ही लेंदा तारियां।

ऊपर की पंक्तियों को देख कर ऐसा प्रतीत होता है कि राजा की दृष्टि भी गढ़ मलौण पर पड़ चुकी थी और उसी गढ़ (किला) का विवाद राजा के हृदय में उथल पुथल मचाए हुए था यद्यपि राजा सैर कर रहा था परन्तु उस का दिल बिना पानी के हिचकोले खा रहा था (तारियां का अर्थ वैसे तैरना होता है परन्तु यहां पर भाव हिचकोले खाने से है)।

चौथी और पांचवीं चौपाई में बिलासपुर नगर की सुन्दरता और सतलुज नदी के ठण्डे पानी का वर्णन किया है। तत्पश्चात् रानी बादलां राजा को उलाहना देती है जो यहां की ही नहीं सारे भारत वर्ष की संस्कृति की बेजोड़ मिसाल है। पति के मनोबल को उत्तेजित करने के लिए पत्नी द्वारा उलाहना दिये जाने पर पति को आगे बढ़ने के लिये उत्साहित होना पड़ता है, वह कहती है—

हत्था जोड़ी के राणी बोलदी,
मेरी अर्ज सुणी ले मन लाई।
राणी बोले सुण मेरे राजा,
सूरमा नी जमेया कलूरा कोई।

रानी बादलां कहती है कि राजा जी क्या बिलासपुर में कोई ऐसा सूरमा उत्पन्न नहीं हुआ है जो हमारे शत्रु से लोहा ले सके। यद्यपि अभी तक "गढ़ मलौण" का कोई वर्णन नहीं आया परन्तु रानी के हाव-भावों से राजा सब कुछ समझ गया था

परन्तु आज मेरी लाज तेरे हाथ में है । चौपाई इस प्रकार है—

अज्ज बालक टिक्का असां रा,
राजेआ तेरिया गोदा ।
हंडूरिया तिजो बोले पम्मेया,
सुणया तू दिल लाई ।

घाली जायां ओ मेरिया
औखिया घड़िया रे भाईया ।
परमेसरे दित्ती वजीरी कहलूरा री,
इंयां ई मिलगी तिजो हंडूरा री ।

यहां पर गोद में होने का अभिप्राय चारों ओर से निश्चिन्त होना है । "राज-आ-तेरिया गोदा" का अर्थ है हंडूर का राजा आप की शरण में है यदि आप चाहें तो यह बच सकता है अन्यथा नष्ट हो जाएगा । 'इंयां' पहाड़ी का विशुद्ध शब्द है जिस का अर्थ है, इसी तरह । इसी चौपाई की पहली और दूसरी पंक्ति "घाली जायां ओ आ मेरिया, औखिया घड़िया रे भाईया" सम्भवतः इन्हीं पंक्तियों के कारण पम्मे का दिल पसीज गया हो । बड़ी मार्मिक, दिल को छू जाने वाली लाइनें हैं । इन का अभिप्राय है, हे मेरे धर्म के भाई ! मैं आज मुसीबत में फंसी हूं । भ्रातृत्व का कर्त्तव्य निभाते हुए इन मुसीबतों का आप निवारण करो ।

गायकों का कहना है कि पम्मा पत्र को पढ़ता है, पत्र का रहस्य सेनाओं तक नहीं पहुंचाया जाता और समय पा कर पम्मा अपनी सेनाओं की दृष्टि से ओझल हो जाता है । चौपाई संख्या बीस में आकर पम्मा हंडूर के राज महलों में पहुंच जाता है । चौपाई इस प्रकार है :—

ओ जी असें आए देई जो,
अज्ज तुसां रे पावणें ।
तू बैठेयां अंद्रोल करयां,
ओ सुणेयां राणी बसो:लिए ।

जब पम्मा हंडूरी महलों में प्रवेश करने लगता है तो वह रानी को संदेश भेजता है कि मैं (पम्मा) आ रहा हूं अतः आप अन्द्रोल (पर्दे) में चले जाओ ।

राणी बोले सुण ओ पम्मेयां,
हऊं कदी भी भट्टा ओ:तां,
कने कान्दुआं कमीणा ते
अन्द्रोल नी करदी आई ।

विश्राम नहीं करना चाहते । वे पम्मे से अनुरोध करते हैं कि उन्हें आक्रमण करने की आज्ञा दी जाए क्योंकि वे विश्राम नहीं करना चाहते । चौपाई इस प्रकार है--

ओ भाई रे पम्मे बजीरा,
असां नी राती भी बैठणा ।
तू करी दे छोड़ हुकमा,
असां जाणा हुण लड़ना ।

सुणा ओ मेरे भाइंयो,
धुप्पे पर न छेड़िये सुराड़,
हट्टा पर न छेड़िये कराड़,
रणा खातर नी छूइए तुलार ।

उक्त पन्द्रहवीं चौपाई में बड़ी सुन्दर लोकोक्तियां गाई जाती हैं जिन में सत्यता कूट कूट कर भरी पड़ी है । पहली लोकोक्ति धुप्पे पर न छेड़िए "सुराड़" का अर्थ है कि कड़कती धूप में सुराड़ (बहुत लम्बी और मोटी घास जिस से मकान छाए जाते हैं) नहीं छेड़ना चाहिए अथवा काटना नहीं चाहिए क्योंकि ऐसे समय में इस घास में सांपों का वास होता है । दूसरी लोकोक्ति "हट्टा पर न छेड़िए कराड़" का अभिप्राय है कि दुकान पर बैठे कराड़ (दुकानदारी करने वाली एक जाति विशेष का नाम) से कभी भी झगड़ा नहीं करना चाहिए क्योंकि वह किसी भी प्रकार का इल्ज़ाम लगा सकता है । तीसरी लोकोक्ति "रणा खातर नी छूइए तुलार" है । यह लोकोक्ति सदियों से चलती आ रही भारतीय नीति की प्रतीक है । पम्मे द्वारा इन शब्दों को कहलवा कर इस बात की पुष्टि कर दी गई है कि यद्यपि हम निर्बल नहीं हैं, भीरू नहीं हैं परन्तु फिर भी युद्ध की खातिर तलवार सम्भालने से पहले काफी कुछ सोचने विचारने की आवश्यकता होती है । कोई भी विवाद यदि बिना युद्ध से सुलझाया जा सके तो व्यर्थ में रक्तपात नहीं करना चाहिए । इन बातों के उपरान्त सम्भवतः पम्मे को संधि का कोई रास्ता नजर न आने पर युद्ध के लिए विवश होना पड़ा था ।

सोलहवीं तथा सतहरवीं चौपाई में पम्मे की सेनाओं ने हंडूर के एक बड़े भाग को तहस नहस कर डाला । गायकों का कथन है कि पम्मे ने यदि एक और आक्रमण कर दिया होता तो उस की सेनाएं राज महलों तक ही पहुंच गई होतीं ।

चौपाई संख्या 18 तथा 19 में हंडूर के राजनीतिज्ञों ने एक चाल चली और पम्मे को पत्र भेजा जिस में हंडूर की रानी की ओर से पम्मे को लिखा गया कि मेरा टिक्का अभी बहुत छोटा है अतः इस देश का राज्य तेरिया गोदा (तेरी शरण में) है । कहलूर में आप को बजीरी दी गई है सो यहां भी आप को बजीरी मिल जायेगी ।

सत्ताइसवीं चौपाई में कहलूरी फौजें हंडूर पर पूरी शक्ति से आक्रमण करती हैं। 28वीं में हंडूर के राजा भूप सिंह और मियां हिम्मत चन्द कहलूर बहादुरों का बखान करते हैं। 29 वीं चौपाई में हिम्मत चन्द आदि भी युद्ध में शामिल होने के लिए चल पड़ते हैं। वहां पहुंच कर उन्होंने कहलूरी सेनाओं की वीरता को देखा और राजा भूप जी मियां हिम्मत सिंह को राज्य का काम काज चलाने के लिए हंडूर वापिस भेज देते हैं। अंत की चौपाई में कहलूरी सेनाओं की वीरता का बखान किया गया है। और बिलासपुरी में प्रसन्नता की नौबत बजने का वर्णन आता है। यथा—

राणी बसोःली थी बड़ी आकल
नामी तिसे सदेया सपाही ।
हत्थे दित्ती कटोरी केसरा
बुकला विच लुकाई केसरा री तुलार ।

लहोय आई पूजी मंदोरड़िया,
फौजा रे नामी स्पाइये देखी ।
देखी लाहोय इक बिद्ध बनाई,
रातों रात बीरिया बजीर लेया सदाई ।

बीरिया बोले सुणां मेरे भाईयो
बदला लैणा असां अज्ज जाई ।
कस्सी लेआ सारे अपणिया पेटियां,
पासणा करो अज्ज हंडूरा जाई।

कचहरिया बैठे राजा भूप कने हिम्मत,
लगी रे थे सोचणे से दोनों जणे ।
निक्कू नोगलू कने सुंधाल,
करा दे ढलाकेयां अन्दर हंडूरा ।

राजा बोलेया चल ओए हिमता,
कहलूरिया री जुगत बणाइये ।
दोनों भाई होई गए सुआर,
देखया ये सारा हाल ।

तिन्हें देखेया जोस कहलूरियां रा,
ओजी सह होया फेटेया नसाणे ।
हिम्मत चन्द ओथी ते नठेया,
मुःडेयां पर रेइयां सोजा कमाणा।

पम्मे की बात को सुन कर रानी बड़े कड़े शब्दों में कहती है कि मैं भाट, पुरोहित, तथा अन्य कान्दूग्रा कमीणों (इन दो शब्दों में वे सभी लोग सम्मिलित हो जाते हैं जो कोई न कोई पेशा करते हैं) से पर्दा नहीं करती । यद्यपि मन्त्री का पद मान प्रतिष्ठा से देखा जाता है और उन से पर्दा भी किया जाता होगा परन्तु वह न तो मन्त्री था और न ही वहां बनाया जाना था। इस लिए रानी ने परोक्ष रूप से उसे संक्षेप में उस की बात का उत्तर दे दिया था । परन्तु दुर्भाग्यवश अथवा विवशता के कारण उसे अपने पग आगे बढ़ाने पड़े । कुछ आगे पहुंचने पर हंडूर के मियां हिम्मत सिंह ने बोली मारी—

हिम्मत चन्द मियां बोली मारदा,
पम्मेया कुण जआ गढ़ ढलाणा ।
इक गढ़ जौड़ू, दूआ बघोलू तीजा मलौण,
बोल पम्मेया जे तू कुण ढलाणा ।

'बोली मारना' हृदय विदारक शब्द होते हैं और यह विशुद्ध पहाड़ी मुहावरा भी है। हिम्मत चन्द कहता है कि–मियां पम्मे ! कहलूर की सीमा पर गढ़ जौड़ू, बघोलू और मलौण तीन किले हैं, तू बता कि तूने कौन सा किला तुड़वाना है ? अब मियां पम्मा सारी चाल समझ गया था परन्तु बड़े उत्साह के साथ उसे उत्तर देता है कि–कोई बात नहीं। यदि मैं यह कार्य पूरा नहीं कर सका तो मेरा राजा गम्भीर चन्द यह सब कुछ कर दिखाएगा । परन्तु साथ ही उसे भयभीत भी दिखाया गया है वह कहता है कि —

गढ़ ढलाणा गम्भीर चन्द राजे,
सह बदला लैंगा एथी आई ।
पर इक बामणा जो मारना,
सौआ गाए री हत्या होई ।

अर्थात् आप लोग यह भी याद रखें कि एक ब्राह्मण की हत्या करना सौ गायों की हत्या के समान होता है। भले ही बाद में रानी ने पम्मे के साथ धोखा किया। परन्तु हिमाचल की यह प्रथा है कि एक धर्म भाई धर्म बहन के प्रति उन सभी कर्त्तव्यों का पालन करता है जो उसे अपनी सगी बहन के प्रति निभाने होते हैं। यह भाई-चारा चौपाई सं० 19 में लिखा गया है। उन लाइनों को पढ़ कर हिमाचल की धार्मिक विचार धाराओं का स्पष्ट पता चलता है कि यहां धर्म के प्रति अपने आप को कहां तक ले जाना पड़ता है उक्त चौ० न० 24 में समाज द्वारा ब्राह्मणों के प्रति आदर, श्रद्धा का भी पता लगता है ।

चौपाई संख्या पच्चीस में कपट द्वारा पम्मे की हत्या कर दी जाती है और लहोथ (लाश) कहलूर की सेनाओं के पास भिजवा दी जाती है। सेनाएं अपने मुख्य के गुम हो जाने पर पहले ही चिंतित थी और अब लाश को देख कर अत्यधिक क्रोधित हो उठी। उन्होंने रात ही रात में बिलासपुर से दूसरा बीरिया नाम का बजीर बुला लिया

अन्तिम दो लाईनों से यह भी प्रतीत होता है कि इस प्रदेश में शिकार खेलना क्षत्रीय जाति का धर्म रहा है जो अब भी दे ने में आता है ।

आठवीं चौपाई में राजा भरतरी शिकार खेलने हेतु विशेष पांच कपड़ों (सम्भवतः जो शिकार खेलने के लिए बनवाए गए हों) को मांगता है । वन में पहुंच कर उसे हिरणों का एक झुंड नजर आता है । ज्यों ही वह अपने धनुष पर बाण चढ़ाता है तभी एक हिरणी सामने आ कर उसे कहती है (यद्यपि हिरणी बात तो नहीं कर सकती परन्तु सम्भवतः हिरणी की भाव भंगिमाओं को देख कर राजा भरतरी के हृदय में ही इस प्रकार के भाव उत्पन्न हो रहे हों) हिरणी बात करने से पहले आंखों से आंसू बहा रही थी ऐसी परिस्थिति में वह राजा के पास प्रार्थना करते हुए कहती है कि हे राजा ! जिसे तेरा जी चाहे तू उस हिरण को मार लेना परन्तु हीरे नामक हिरण को भूल कर भी बाण न मारना क्योंकि हीरे के बिना हिरणों का मेरा सारा डार (झुंड) खाली पड़ जाएगा, निराश्रित हो जाएगा । हरिणी आगे फिर कहने लगी कि राजा तू इस हिरण की बजाए भले ही चार हिरणियों को मार लेना। चौपाई इस प्रकार है :—

—हत्थें पकड़ेया राजें तीर,
चढ़ाई लेआ तिस पर बाण ।
हत्था जोड़ी हिरणी बोलदी,
सुण राजा पहलें मेरी बात।

सुकियां प्रौलियां हिरनी छड़दी,
करदी अर्ज सह राजे बाल
हीरे हिरणा देखेयां मारदा ।
खाली पौणा मेरा डार ।

हत्था जोड़ी हिरणी बोलदी ,
सुणेया राजा मेरी बात ।
हीरे हिरणा देखेया मारदा ,
हिरणियां मारेयां भौए चार।

परन्तु राजा भरतरी हिरणी की बात कब मानने लगा था। हीरा जवान, मोटा, ताजा और सुन्दर पशु था राजा की दृष्टि केवल उसी पर लगी थी । अन्ततः उसने अपना बाण हीरे पर छोड़ ही दिया, जैसे :—

बाण संडेया राजे भरतरिए,
हिरणू गया पयाल ।
दूआ बाण संडयां राजे,
हिरणू गया समाण ।

ओ जी कांसिया रा लंक बेटड़ा,
खोंजी खोंजी ने बरछिया मारे।
लड़ी लड़ी ने मारे हंडूरिये सारे,
ए सुणी ने बिलासपुर बज्जे नगारे।

उक्त चौपाइयों को देखने से प्रतीत होता है कि इस गाथा में जहां हंडूर की सेना की पराजय है वहां कहलूर की फौजों की वीरता का चित्र श्रोताओं में एक जोश भर देता है। एक सेनापति की हत्या का बदला लेने हेतु उन्होंने कोई कसर छोड़ नहीं रखी। उक्त चौपाइयों में आकल-बुद्धिमान, हत्थें दित्ती केसरा री कटोरी-केसर की कटोरी हाथ में दे दी जो उच्च पदवी अर्पित करते समय प्रयोग में लाई जाती थी, बुकला अन्दर-कपड़ा ओढ़ कर उस के अन्दर कोई चीज छुपा लेना, लकाई-छिपा ली, तुलार-तलवार, लहोथ-लाश, मन्दोरड़िया - एक स्थान का नाम जहां पर कहलूरी सेनाओं का मुख्य अड्डा था, नामी-प्रसिद्ध विद्ध-विधि, निक्कू - एक प्रसिद्ध सैनिक का नाम, नोगलू कने सुंघाल वीर जातियों के नाम, जुगत-मुरम्मत-किसी के होश ठिकाने लाना, फेटे नसाणे-शास्त्र झुका देना, नठेया भाग गया, कांसिए वीरिया सेना ध्यक्ष का पिता।

राजा भरतरी (झेड़ा):

राजा भरतरी की गाथा में प्रारम्भिक तीन चौपाइयों में इन के जन्म तथा लालन-पालन का वर्णन है। परन्तु चौथी चौपाई में, जबकि भरतरी की आयु केवल सात वर्ष की बताई गई है, इसे विवाह के योग्य बताया गया है। पांचवीं चौपाई में पंडित और ज्योतिषी द्वारा राजा भरतरी की जन्म कुण्डली एक प्यूंगला नामक राज कन्या की जन्म कुण्डली से मिलाई जाती है। आठ वर्ष की आयु में इन का विवाह कर दिया जाता है और केवल नौ वर्ष की आयु होने पर इनकी रानी प्यूंगला इन के रणिवास में प्रवेश कर जाती है उक्त वर्णित छः चौपाइयों से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि इस प्रदेश में बाल-विवाह की प्रथा कई सदियों से चली आ रही है। विवाह के समय राजा भरतरी की आयु केवल आठ वर्ष की बताई गई है। इस से आप अनुमान लगा सकते हैं कि उस समय प्यूंगला की आयु क्या हो सकती है? इस प्रदेश में अभी तक भी इस कुप्रथा का समूल नाश नहीं हो पाया है। सत्रह वर्ष के बालक का विवाह आज भी यहां उदाहरण के रूप में हुआ है।

चौपाई संख्या सात को सुन कर ऐसा लगता है कि राजा भरतरी विवाह के पश्चात कई वर्षों तक-अपने रंग महलों के अन्दर ही अपना जीवन व्यतीत करते रहे क्योंकि प्यूगला द्वारा किये गये कटाक्ष से यह स्पष्ट हो जाता है, चौपाई इस प्रकार है :-

-प्युंगला राणी राजे बोलदी,
कदी बी नी खेलेया सकार।
छत्री धर्म बोलदा,
राजे खेलणा चाइदा सकार।

हो सकते हैं उक्त चौपाई में "एड़ा" और "तेड़ा" ठेठ पहाड़ी शब्द हैं जिन का अर्थ क्रमशः "ऐसा" और "वैसा" या "तैसा" है।

उक्त विचारों में विलीन राजा भरतरी अपने महलों में पहुंच जाता है। सत्रहवीं चौपाई में राजा भरतरी सीधा दर्जी के पास जाता है और उस से एक भिक्षार्थ चोली और पहनने के लिए एक चोला सिलवा लेता है तत्पश्चात् इन्हें भगवें रंग में रंगवा लेता है और जोगी बन जाता है। अठारहवीं चौपाई में आकर राजा जोगी बन कर अपनी माता के महलों के पास आ कर अलख जगाता है। अगली चौपाई में माता विस्मित सी हो कर उस से पूछती है कि हे जोगी तू कौन है? कहां से आया है? और कहां जा रहा है? (राजा भरतरी को साक्षात देखते हुए भी उसे यह विश्वास नहीं हो रहा था कि वास्तव में ही यह मेरा बेटा हो) राजा भरतरी द्वारा अपना परिचय देने पर माता किंकर्तव्य-विमूढ़ सी हो जाती है परन्तु फिर भी अपना साहस बटोर कर वह कहती है :–

किहां त्यागे भरतरिया तैं भोग,
किहां त्यागेया तैं सारा राज।
किहां त्यागी हे राजा तैं माता,
किहां छड्डी तैं अपणी नार।

वास्तव में यह सारी गाथा ही करुणा रस से परिपूर्ण है परन्तु गायक जब उक्त चौपाई को गाते हैं तो श्रोतागण आंखों से आंसू बहाते हुए सिसकियां भरते हैं। उक्त चौपाई में वर्णित चारों पदार्थ जो राजा लोगों को अतिप्रिय होते हैं, उन का एक-दम त्याग देना वास्तव में ही एक आश्चर्य चकित घटना है। यहां पर आकर राजा लोगों के ऐशो-इशरत का पता लगता है कि ये लोग कितने विलासी होते थे। इक्कीसवीं चौपाई में आकर राजा अपनी माता को केवल इतना ही कहता है कि मां मैं जंगल में शिकार खेलने गया था वहां पर मुझे एक हिरणी ने ज्ञान दिया जिसके फलस्वरूप ये सभी सांसारिक वस्तुएं त्यज्ञ समझ कर मैंने छोड़ दीं, चौपाई इस प्रकार है–

इक दिन गया मैं माता जंगला
हिरणिए दित्ता था मिंजो ग्यान।
महल मुनारे सुख दुःख ये सारे,
आया ग्यान भोग नट्ठे सारे॥

यहां पर केवल एक ठेठ पहाड़ी शब्द "नठे" आया है जिसका अर्थ "भागे" होता है, माता से भिक्षा प्राप्त कर लेने पर राजा भरतरी अपने महलों के पास जाता है और अलख जगाता है–

मजले मजले भरतरी राजा,
पुजेया आपणे महलां आई,
भिछ्या देआं ओ राणी प्युंगला,
जोगी खड़ेया तेरे द्वारे आई।

जैसे ही बाण कमान से निकला, हीरा पाताल लोक को उतर गया। यहां पर "पताल" शब्द का प्रयोग सम्भवतः गहरे खड्डे से है। "समाण" का शब्दार्थ आकाश होता है परन्तु भावार्थ ऊंची चोटी से लिया जा सकता है। दो बाण निष्फल जाते देखकर राजा भरतरी क्रोधित हो जाता है और वह इकठे तीन बाण छोड़ देते हैं और हीरा अपनी देह त्याग देता है जैसे :—

रोएं भरेया राजा भरतरी ,
कड्ढे तिनो तिन्न बाण।
तिन्नो बाण बाहे राजे,
हिरणुए छड्डे प्राण ।

चौपाई में कड्डे–निकालना, बाहे – मारे–चलाए, विशुद्ध पहाड़ी शब्द आए हैं।

—हत्यां जे जोड़ी हिरणी बोलदी ,
सुणी लै राजे मेरी बात।
एढ़ा जै बछोड़ा हाये असां जो पाया ,
एढ़ा ही राणी प्यूंगला जो पौए ।

लेई वे हिरनू राजा भरतरी,
मुड़ेया महलां रे पासे जो।
घोड़ा अग्गे अग्गे जांदा था,
पर दिल तिसरा पिछे रहंदा था।

उक्त चौपाइयों में हिरणी हीरे के वियोग वश राजा भरतरी को शाप दे देती है। वह कहती है कि जैसे तूने हमें विधवा बना दिया ऐसें ही तेरी रानी भी विधवा बन जाएगी। इस बात की यथार्थता का बोध होते ही राजा हीरे को ले कर महलों की ओर तो चल पड़ा परन्तु उस का हृदय हिरणी के शब्दों में उलझा हुआ था। इस से आगे गायक केवल कथा के रूप में सुनाते हैं कि राजा भरतरी के हृदय में जब जब बहुत उथल पुथल मची हुई थी और विवश हो कर उसने पीछे घूम कर देखा तो हीरे हिरण का सारे का सारा डार आंसू बहाता हुआ निर्भीकता से निष्प्राण हो कर राजा के पीछे मंद–मंद गति से आ रहा था। उन्हें देख कर राजा ने घोड़ा रोक लिया और निस्तब्ध हो कर खड़े का खड़ा रह गया। हिरणों का झुंड जब काफी समीप आ गया तो उसी समय हिरणी ने राणी प्यूंगला के विधवा होने का शाप दिया था।

गायक आगे फिर कहते हैं कि इस घोर दुःख-दायक शाप की सत्यता के भय से राजा भरतरी कांप उठा और उसे अपनी मृत्यु सामने खड़ी ठहाके मारती हुई सी दिखाई देने लगी। बस यहीं से उसके हृदय में वैराग्य ने घर कर लिया । उस के हृदय में यह धारणा बैठ गई कि अति शीघ्र उसकी मृत्यु होनी सम्भाव्य है। अत: भौतिक उलझनों को त्याग कर जीवन के शेष गिने गिनाए क्षण अध्यात्मिकता में व्यतीत करना ही श्रेयकर

कमा कमाई बोले गुरु जियालाल,
सुण ओ राजा जोगी भरतरिया ।
तीजी धूणी ओ पई री खाली,
तू लै अपणा आसण जमाई ।

उक्त तीनों चौपाइयों में "पछाड़ा" "पोंदी" "तिसें" "सीसें" "धूणी" "तीजी" और "आसण" पहाड़ी शब्द आए हैं जिनका अर्थ क्रमशः "धड़ाम से पीछे गिरना", पड़ जाना आग का वह धूना जिस के पास बैठ कर साधु लोग तपस्या करते हैं "तीसरी", और आसन है।

यह गाथा एक वेदना से परिपूर्ण झेड़ा है। इसमें एक टीस है और एक त्याग है। इस में जहां हिरणी का विनम्रभाव हमारे सामने आया है वहां पर उस का ज्वाला से परिपूर्ण श्राप भी श्रोताओं को कंपा देने वाला है। माता का बच्चे के प्रति जहां मोह दिखाया है वहां उस बच्चे के रास्ते में विघ्न डालने की भावना भी उभर कर हमारे सामने आई है। राजा भरतरी जहां अपनी कर्त्तव्य निष्ठा में अटल हैं वहां रानी प्युंगला भी किसी से पीछे नहीं है। वह भी अपने पति के बिना अपना शरीर त्याग देती है। कहने का तात्पर्य यह है कि इस गाथा में कोई भी पात्र ऐसा नहीं जिसने अपने कर्त्तव्य का पालन दृढ़ता से न किया हो, एक आदर्श स्थापित न किया हो।

उक्त तीनों गाथाओं में नीति, वीरता, देश-द्रोह, सभी कुछ देखने को मिलता है। "गढ़ मलौण" तथा "राजा भरतरी" में स्त्री पात्रों द्वारा जो कार्य दिखाए गए हैं उन में कूट नीति, वात्सल्य, प्रेम तथा पतिव्रता के अच्छे नमूने हिमाचल की संस्कृति को व्यक्त करते हैं। इस प्रदेश की संस्कृति में जहां विनय है, नम्रता है वहां इस प्रदेश की शीतलता में व्यंग्य तथा ज्वाला भी विद्यमान हैं।

—ग्राम बैरी, डाकघर भुक्कड़,
तहसील तथा जिला हमीरपुर,
हिमाचल प्रदेश।

राणी प्यूंगला आवाज से ही अपने पति को पहचान लेती है और वह उसे देखते ही चीखें मार मार कर रोने लगी। चौपाई को सुनते ही श्रोतागण रोये बिना कभी नहीं रह सकते। चौपाई इस प्रकार है:-

प्युंगला रोंदी धाड़ां मारदी,
ओ राजा केह छुड़ी तैं नार।
राजा जोगी अटल जोगी बणेया,
भिक्षा लेई कने चलदा बणेया।

राजा को योगी वेश में जाते देख कर बाज़ार के सभी बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष राजा को रोकने के लिए इस प्रकार कहते हैं-

मजले मजले फेरी चलदा राजा,
भरतरी जांदा फेरी सहर बजार।
सारे बणिएं कनें परजा बोले,
सुणी लै राजा तू असां री पुकार।

राज्जा त्यागी जोगी न बण,
बालक तू बालक तेरी बरेस।
पर राजा सच्चा साधु बणेया था,
किसी री बी नि चली पेस।

उक्त चौपाइयों में केवल "पुकार" "बरेस" और "पेस" आए हैं जिनका अर्थ क्रमशः "याचना" "आयु" और "ज़ोर-वश" है। उक्त चौपाइयों के अनुसार राजा भरतरी किसी की नहीं सुनता और जंगल का रास्ता ले लेता है। परन्तु राणी प्युंगला इस हृदय-विदारक घटना को सहन नहीं कर पाई और अपना शरीर त्याग देती है चौपाई इस प्रकार है :-

मजले मजले था चलदा राजा,
भरतरी जांदा जंगला पास।
खाई पछाड़ां राणी प्युंगला पौंदी,
त्यागी दिते तिसें अपने प्राण।

अन्तिम दो चौपाईयां इस प्रकार है:-

हत्थां जोड़ी अर्जा जे करदा,
चरणे तिनी सीस झुकाया।
तीजिया धूणिया पर जाई बैठेया,
कलेसर भाग जगाया।

जब श्वेतकेतु की व्यवस्थाओं का उच्छृंखल मनुष्य उल्लंघन करने लगे तब मनु ने अन्यान्य माध्यमों से जुड़े युगलों को भी अन्यान्य संज्ञायें देकर ब्राह्म से पैशाच तक आठ प्रकार के उत्तरोत्तर अधमाधम ब्याह स्वीकार किये हैं। विवाह यद्यपि गार्हस्थ्य जीवन के लिए बड़े महत्त्व की वस्तु है परन्तु जंचता है यह पूर्णतया सामाजिक कृत्य ही है। तो भी प्राय: सभी धर्मों ने इसे न्यूनाधिक धार्मिक रूप दिया हुआ है। सम्बन्धित धर्मों वाले अपनी अपनी धार्मिक प्रक्रियाएं निबाह कर उस इस पर अपनी मोहर लगाते हैं। ऐसा ही हिन्दू धर्म में भी है, इस में मनु जी ने जो ब्राह्म, देव, आर्ष, प्राजापत्य, गंधर्व, आसुर, राक्षस और पैशाच विवाह नियत किये हैं। इस में ब्राह्म विवाह तो पूर्णतया धार्मिक ही अनुष्ठान सा है जिसमें ईश्वर या अग्नि को साक्षी बना कर इसे आध्यात्मिक रंग देते हुए मंत्रों और प्रक्रियाओं द्वारा जोड़ कर पक्का किया जाता है, वही असली विवाह माना जाता है। इसी विधि द्वारा परिणीता स्त्री पत्नी या धर्मपत्नी कहलाती है और इसी से उत्पन्न पुत्र को सुपुत्र कहा जाता है जो बारह प्रकार के पुत्रों में सर्वश्रेष्ठ है और इसी पुत्र को दाय का भागी माना गया है।

यद्यपि हमारा विषय क्षेत्रीय है तथापि भूमिका रूप में इतना भर लिखना आवश्यक प्रतीत हुआ। उद्देश्य हिन्दू विवाह न होने पर भी, कुल्लू पूर्णतया हिन्दू क्षेत्र है अत: हिन्दू शब्द का प्रयोग किया गया है। कुल्लू जनपद में भी ब्राह्म-विवाह को ही श्रेष्ठ माना जाता है और प्रत्येक आदमी इसी विधि से अपने पुत्र-पुत्रियों को सजाना चाहता है। परन्तु कई क्षेत्रों में ऐसे प्रतिबन्ध हैं कि लोग अपनी प्रचलित परम्परागत शैलियों को तज कर ऐसा नहीं कर सकते, इसी लिए कुल्लू जनपद में औरस (कुंड-गोलक आदि) पुत्रों को भी दाय भाग का अधिकारी माना गया है। इस प्रतिबन्ध के न रहने स कुल्लू क्षेत्र में अब्राह्म विवाह भी कम नहीं होते और उन द्वारा गृहीता स्त्री को भी समाज में बराबरी का स्थान प्राप्त है।

1. **ब्राह्म विवाह**:–यह शास्त्र सम्मत है ही। इसकी प्रक्रिया पद्धति, कर्मकांड प्राय: निश्चित है तथापि गृह्य-सूत्रों के अतिरिक्त पद्धतिकारों ने और उससे भी बढ़ कर कर्मकांडियों और उन से भी बढ़ कर स्त्री या परम्परावादी लोगों ने इसे बहुत लम्बे चौड़े विधि-विधानों का गोरख धन्धा सा बना रखा है और इन्हीं सब के सम्पादन से ही उनका चाव पूरा होता या मन भरता है, सो सभ्य कहाने वाले लोग कुल्लू में भी शास्त्र-विधि के अतिरिक्त अपने समाज या कुलाचार द्वारा ब्याह करते हैं। वर सजधज कर पगड़ी सेहरा लगा, बाजा बारात ले कर पालकी या घोड़े पर कन्या के घर जाता है, वहां विधि सम्पन्न करके स्वागत सत्कार सहित दायज यौतुक लेकर विदा हो घर आते हैं और घर आकर धाम (बिरादरी भोज) देते हैं।

कुल्लू घाटी देवताओं की घाटी कहलाती है, क्योंकि यहां के देवी देवताओं की जंगम मूर्तियां सजधज कर शोभा यात्राओं में चलतीं, नाचतीं, और संकेतों अथवा प्रतिनिधि के माध्यम से (जिसे गूर कहते हैं), अपना परामर्श भी देती हैं; बल्कि वे वैद्यों, ज्योतिषियों और पुरोहितों की भी भूमिका निभाती हैं। गूर (जिसमें देव शक्ति प्रविष्ट हो कर बोलती है) देवता ब्याह की तिथि निर्धारित करता है और विवाह की विधि

कुल्लू जनपद मे विवाह
संस्कार सम्बन्धी शब्दों का सांस्कृतिक धरातल

—चन्द्र शेखर 'बेबस'

यह बात तो विश्व भर के सभी संभागों, धर्मों, जातियों के तत्ववेत्ता जानते-मानते हैं कि सृष्टि कर्ता ने संसार के आविष्कार और निर्माण के उपरान्त इसको प्रगतिशील बनाकर स्थायित्व प्राप्ति की दिशा में आत्म निर्भर बनाने क लिए दो जातियों की कल्पना की। उन में से प्रत्येक में दूसरे के लिए भूख और आकर्षण भर दिए। एक में पौरुष और दूसरे मातृत्व, वात्सल्य आदि गुण डालकर दोनों की एक इकाई बनाई—यह इकाई नर-नारी युगल के सिवा और कुछ नहीं, यही दो जातियां भगवान ने बनाई एक पुरुष एक स्त्री। ये दो जातियां मात्र मनुष्यों में ही नहीं प्रत्युत प्रत्येक प्राणी नहीं, बल्कि समस्त उन वनस्पतियों तक में, जिन्हें हम निर्जीव मानते हैं, पायी गई हैं। जो वस्तु परिवर्तन-शील अर्थात् गर्भाधान, जन्म, वृद्धि और नाश और पुनः बीज सौरभ आदि द्वारा इसी चक्र, जन्म, वृद्धि, नाश में प्रवृत्त हैं उन सभी में है फारसी में इन्हें नर और मादा कहते है— इन में संयोग की इच्छा और पूर्ति से संसृति। इसी लिए हम बहुत से छोटे से छोटे देह धारी जीव जोड़ा-जोड़ा दिखायी पड़ते हैं। ये नर-मादा संयोग करते, बच्चे जनते और पालते हैं। अगली बार के लिए कुछ निश्चय नहीं कि ही वे नर-नारी पुनः संयुक्त हो कर संतान उत्पन्न करें। ऐसा ही कुछ तब भी था जब मानव समाज पूर्णतः गठित व्यवथित नहीं था, कोई भी पुरुष-स्त्री आकृष्ट, संयुक्त होकर सृष्टि धर्म निबाहते थे। यह प्राकृतिक है उसके आगे उन पर कोई दायित्व नहीं था। जब वात्सल्य पर वासना ने विजय पाई तो बड़े बड़े श्रेष्ठ पुरुषों की नारियां भी नन्हें नन्हें बच्चों को तज कर अन्य पुरुष के संग हो लीं। एक प्रसिद्ध ऋषि वाजश्रवा उद्दालक की पत्नी श्वेतकेतु आदि संतानों को छोड़ कर किसी अन्य के साथ चली गयी, बच्चों को माता का अभाव खटका। बालक श्वेतकेतु ने पिता से पूछा—क्यों पिता जी ! क्या मानव समाज ने आज तक ऐसी कोई व्यवस्था नहीं की कि नर-नारी युगल संयोग के अतिरिक्त कोई दायित्व भी धारण करे। इस अभाव को आगे चल कर श्वेत केतु ने विवाह-प्रथा को संस्कार रूप में व्य-वस्थित करके पूर्ण किया जिसका आगे चल कर मनु आदि ऋषियों ने और भी परिष्कार-विस्तार किया।

प्रकृति ने मात्र योनि (मनुष्य, पशु पक्षी, आदि) और लिंग का ही भेद किया है, जब कि ऋषियों ने वर्ण, जातियों, आयु, सम्बन्ध (नाते-रिश्ते) ज्योतिषियों ने ग्रह, राशियों के मेलापक द्वारा वात्स्यायन आदि ने शश, मृग आदि पुरुष और पद्मिनी, चित्रिणी आदि नारियों की जातियां निर्धारित कर के इस विवाह को उपयोगी बनाने के प्रयत्न किये।

7. **मुल ब्याह.**—यह शास्त्रोक्त ग्रासुर विवाह ही है जिस में कन्या के पिता को कन्या का मूल्य दिया जाता है। इस राशि को 'ब्रीणा' कहते हैं। इस सौदे में सर्व प्रमुख कन्या के पिता का स्वार्थ रहता है। कन्या में जितनी अधिक विशेषताएं और वर में कुल, स्वास्थ्य, सौत-पुत्र आदि सम्बंधी कमियां हों उतना ही लड़की का मोल बढ़ता है। यह प्रथा यत्र-तत्र अब भी सिर उठाती पायी जाती है।

8. **डुग्राल या हार.**—यह है किसी स्त्री को भड़का फुसला कर भगा ले जाना अपहरण करना। यह होती तो रजामन्दी ही है परन्तु यह दूसरे की ब्याहता होती है, इसे अपनाने के लिए इस काम में प्रमुख प्रविधि गोपनीयता है यदि स्त्री के पति को स्त्री छुपाने के स्थान की गंध लग गयी तो सारा गुड़ गोबर हो जाने का खतरा। वह पुलिस लेकर पहुंच जायेगा। अत: 'डुग्राल करू या हार करूं' जोड़े ऐसा स्थान खोज कर ही पग उठाते हैं कि दूर जाकर मजूरी करते हैं। फिर दोनों के अभिभावक सौदेबाजी करके "हरजा" रंध या रीत की राशि नियत करके उसके पूर्व पति से पक्के कागज पर तलाकनामा 'पत्नी-त्याग पत्र' रुपया देकर लिखा देते हैं। तलाक का अधिकार यद्यपि हिन्दुओं में नहीं है पर कुल्लू में 'बे दावा' नाम से यह प्रचलित है। तब स्त्री पुरुष परस्पर 'करार नामा' (प्रतिज्ञा पत्र) लिख कर वैध सम्बन्ध स्थापित करते हैं कई बार सौदा पटने तक बच्चे भी हो जाते हैं।

9. **जबरी ब्याह.**—यह ब्याह राक्षस-पैशाच विवाहों का मिश्रण है और उस से अधिक अधम भी क्योंकि इस में किसी से युद्ध किये बिना और लड़की को जाग्रतावस्था में झपट खेंच कर उसकी अनिच्छा से ले जाया जाता है। पीछे लड़की के मान जाने पर ब्याह बन जाता है। इसे जंघराड़ा भी कहा जाता है (ख) एक दो प्रकरण ऐसे भी सुने गये हैं कि लड़की को बलात् पकड़ कर बराड़ी (झड़बेरी) की झाड़ी में आग लगा कर फेरे कर लिये जाते हैं। अंग्रेजी काल में तो यह अपराध माना गया परन्तु राजा—काल में वह उच्छिष्ट पूर्ण परिणीता समझी जाने से अग्राह्य मानी जाती थी, भले ही अपहरता को दण्डित किया जाय, **इसे 'बराड़ फुक ब्याह' कहते हैं।**

10. बाहरी सराज क्षेत्र में ऐसी भी रीति है कि यदि किसी लड़के की परिस्थितियां अनुकूल या प्रतिकूल हों और विवाह करना या घर चलाना दूभर हो जाय तो लड़का मंगेतर को बिन ब्याहे ही घर ले जाता है अभिभावकों की सम्मति से वहां वह घर संभालती है और दोनों मिल कर परिस्थितियों को संभाल कर ब्याह की तैयारी में लगे रहते हैं और एक दिन वे ब्याह कर ही लेते हैं। कंवारापन गाली जो मानी जाती है। वर के यहां पूरी तैयारी करके लड़की मायके चली जाती है, गोद में कोई बच्चा हो उसे भी साथ ले जाती है। उधर मायके वाले भी पूरी तरह तैयार रहते हैं वर घर में सब रस्में पूरी करके बारात ले कर जाता और ब्रह्म विवाह करता है अतः इस की विशेष संज्ञा नहीं है।

11. **घौर बौसणा**—(घर करना) विधवा या कोई सधवा अपना घर छोड़ कर दूसरे पुरुष के घर चली जाती है इसे साधारण बोल चाल में 'घर बसाना' यानी दूसरा घर कर लेना कहते हैं।

इतनी प्रकार के ब्याह कुल्लू संभाग में हमारे देखने सुनने में आये। हो सकता है किसी अंचल या वर्ग में कोई और भी ढंग हो।

—आलोक, ढालपुर मैदान, कुल्लू (हि० प्र०)।

भी सम्पन्न करता है। पुरोहित की इस में अपेक्षा नहीं रहती इस प्रकार देवता के माध्यम से होने वाला देऊव्याह कहलाता है।

2. देऊब्याह :– इस विवाह में अन्यान्य देवताओं अग्नि आदि के स्थान पर ग्राम या कुलदेवता ही प्रधान होता है। पूजा की घंटी या घंटा जिसे लोक-भाषा में घौंडी और धूप पात्र जिसे "धौड़छ' कहते हैं, 'देऊब्याह' में देवता के प्रतीक तथा गूर का प्रतिनिधि होता है। गूर ब्राह्म-विवाह से मिलती जुलती प्रक्रिया मंत्ररहित ही कराता है और तदनुसार ही दान-दक्षिणा लाग नेग प्राप्त करता है, उस परम्परा को त्याग कर कोई देवता का कोप-भाजन बनना नहीं चाहता। विशेषतया पिछड़े कहलाने वाले क्षेत्रों में यह प्रथा अब भी पूर्ववत है।

3. गणेश पूजा ब्याह.—इस ब्याह में वर पक्ष के कुछ आदमी वर सहित या रहित लड़की वालों के घर जाकर लड़की को लिवा लाते हैं तथा वर के घर आकर पुरोहित साधारणत: गणपत्यादि व कुलदेव की पूजा करा कर ब्याह सम्पन्न करता है और कन्यापक्ष से आई हुई स्त्रियां या लड़की के भाई आदि को विदा किया जाता है। बाहरी सराज में यह 'बदाणी' कहलाती है जो कदाचित "बैदणा" (बुलाना) क्रिया से बना है।

4. शटाम ब्याह.—मनु ने चतुर्थ श्रेणी के ब्याह को प्राजापत्य कहा है और निर्दिष्ट किया है कि कन्या का पिता लड़के-लड़की को सामने बैठाकर उन से प्रेम पूर्वक अपनी गृहस्थी चलाने निभाने का प्रण ले। इसमें लड़की लड़के दोनों की तथा अभिभावकों की भी सहमति होती है, शटाम ब्याह में ये विशेषताएं है कि दोनों की प्रतिज्ञाएं एक सरकारी कागज पर लिपिबद्ध कर ली जाती हैं उसी को शटाम कहते हैं। कुछ लोग तो ब्राह्म आदि विवाह भी शटाम लिख कर करते हैं। परन्तु शटाम ब्याह उसे कहते हैं जिसमें शटाम (प्रतिज्ञा पत्र) लिखना आवश्यक होता है। दोनों ओर के सम्बद्ध व्यक्ति व दो-चार मध्यस्थ मिल कर शर्तें निश्चित करते हैं तथा जो चल या अचल संम्पत्ति दी या देनी होती है उसका, एवं अकारण मार पीट या सौत लाने की स्थिति में बहु को अधिकार होगा कि वह पीहर में ठहर कर खर्च ले या किसी और के घर चली जाये और वर संतान न होने आदि पर दूसरे ब्याह का करार लेता है, आदि। जिन वर्गों में पति-परिवर्तन की प्रथा है वहां वर और वधु की यही सब से अमूल्य धरोहर है जिसे दोनों एक दूसरे से छिपा कर रखते हैं कि दूसरे का करार पत्र चुरा कर कोई पक्ष अनुचित लाभ न उठाए। लड़की को रोकड़ धन देने को 'छेती' कहते हैं।

5. रजामंदी—यह शास्त्रों के गंधर्व-विवाह जैसा हो सकता है परन्तु इसमें अभिभावकों का सहमत न होना भिन्नता है, आज कल इसे प्रेम विवाह या 'लव मैरिज' कहते हैं। ये लोग कभी कभी भावुकता में बह कर किसी प्रकार की व्यावहारिकता को बीच में नहीं लाना चाहते।

6. बाटा ब्याह.—इसमें लड़कियों का आदान-प्रदान होता है। एक लड़की से विवाह करता है तो दूसरे वधु के किसी सम्बन्धी को विधिवत् विवाह में भी एक देनी पड़ती है यदि एक ओर की लड़की इक्कीस वर्ष की हो तो वे एक से अधिक भी लड़कियां बदले में मांगते हैं यह बाटा प्रथा उन वर्गों में है जहां लड़कियों की कमी होती है। शेष सारा कार्यक्रम ब्राह्म-विवाह का होता है।

हिमाचल के कई क्षेत्रों में महाभारत को 'पण्डमायण' कहते हैं। शीत ऋतु में पहाड़ों पर हिमपात होता है तो लोग घरों के भीतर आग जला कर बैठ जाते हैं और रामायण, महाभारत, भर्तृहरि आदि आदि लोक गाथाओं को गाकर अपना मनोरंजन करते हैं। यह क्रम कई कई दिनों तक चलता रहता है।

यहां पर मेलों में एक धनुष बाण का खेल खेला जाता है। उस का नाम ठोठा या ठोड़ा है। इस में खेलने वालों के दो दल बन जाते हैं। एक पांशी और दूसरा शाठी। इन दलों के खिलाड़ी हाथों में धनुषबाण ले कर एक दूसरे की पिण्डलियों पर निशाना मारते हैं। यदि निशाना लग जाये तो तीर मारने वाला उछल-उछल कर अपने पूर्वजों अर्थात् पाण्डवों या कौरवों का नाम लेता है। इस खेल को वे लोग पाण्डवों-कौरवों से जोड़ते हैं। जुब्बल क्षेत्र में गाये जाने वाली 'पण्डमायण' अर्थात् महाभारत का यह रूप है :—

तांईं खं बोलू ला बैवां[1] भाईया,
तुयं भाईया हांसौ[2] रं टेलं[3]।
ऐंजो खेल रौणी[4] दंश्रौले,
श्रा में चाणु लै गीन्दुवं रो खेली।

तांई खं बोलू ला बैवां भाईया,
तुयं भाईया हांसौ रं टेलं।
ऐंजो खेल रौणी दंश्रौलं,
श्रामं दुवं चाणु[5] लं पांशौ री खेलो।

पाणी रा मिलौ ने लोटड़ा मावसिये,[6]
टांगो मिलौ ने टेकणौ खी ठाओ[7]।
बारौ घौर सौ कराणी रे,
मांगियौ इन्दा[8] टुकड़ा खाओ।

राठं[9] ने कौरुवं कुखड़े[10] धाचे[11] थे,
पांजं धाचं पाण्डुवं बराले[12]।
बिल्लियं बोलो बरालयं,
इनौ रौइयो कुखड़े जगाले।

बिल्लियं बोलू बरालियं राण्डे,
जूठे मेरं पीणटु रे धाचे[15]।
चाम्बं[16] खाये ले कुखड़े,
भौरी ला जगंलने[17] खी राचे।

अर्थः—(1) भीम (2) हंस (3) बच्चे (4) रहने (5) बनायेंगे (6) सौतेली मां (7) स्थान (8) यहां (9) साठ (10) मुर्गे (11) पाले (12) बिल्ली रहन (1ɪ) रोटी के टुकड़े (15) पाले (16) चम्बा अर्थात तांबा धातु का रंग (17) जागना

पहाड़ी लोक महाभारत "पण्डमायरण" में प्रयुक्त शब्दावली का समाजशास्त्रीय अध्ययन

--भुवनेश्वरी राठौड़

हिमाचल की लोक-संस्कृति और परम्पराओं में महाभारत का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इसके पात्र पाण्डवों और कोरवों का यहां के लोक साहित्य में पर्याप्त वर्णन मिलता है। यहां तक कि राम-कथा के एक प्रसंग में राम की ओर से पाण्डवों को रावण के साथ लड़ते हुये दिखाया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि हिमाचल में महाभारत का प्रचार रामायण की कथा से बहुत पहले हुआ होगा। कई स्थानों पर तो पाण्डवों और कौरवों को देवता समझ कर पूजते हैं। रोहड़ू तहसील में पब्बर नदी के किनारे मसली नाम के गांव में पाण्डवों का एक मन्दिर है जिसमें इनकी मूर्तियां रखी हैं। जुब्बल में हाटकोटी के प्राचीन गांव को महाभारत के राजा विराट की नगरी से जोड़ते हैं। आज भी वहां पर पब्बर और विशकुलटी नदियों के संगम का नाम पराहट है। स्थानीय लोगों का विश्वास है कि वहां के मन्दिरों का निर्माण पाण्डवों ने किया था। इन मन्दिरों को वे लोग "पांजौ पांडू रै घीरड़ू" कहते हैं। उधर तौंस नदी के किनारे हनोल नामक स्थान में महासू (महाशिव) का जो मन्दिर है उस के बारे में भी वहां के लोगों का विश्वास है कि उसे भी पाण्डवों ने ही बनवाया था। कुल्लू में भी अनेक स्थान हैं जिनके साथ महाभारतकालीन कई कथायें जुड़ी हुई हैं।

पाण्डव हिमालय में पांडूकेश्वर में जन्मे। यहीं पले। यहां पर लाखा मंडल में दुर्योधन ने पाण्डवों के लिये लाक्षागृह बनवाया था। यहीं पर वनवास के वर्ष बिताये और यहीं स्वर्गारोहण का मार्ग था। यहां की परम्पराओं में पाण्डवों और कौरवों के नाम इस प्रकार जुड़े हैं कि लोग अपने आप को 'पांशी और शाठी' अर्थात् पांच पाण्डवों और साठ कौरवों के वंशज मानते हैं।

लोकगाथा के रूप में जो महाभारत की कथा एकत्रित की गई है उस के अध्ययन से आभास मिलता है कि यहां पर महाभारत की रचना निरक्षर व्यक्तियों ने जनसाधारण के लिये की। मौखिक रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी जो पाण्डव-कथा आज हमें उपलब्ध है, उस में समय और काल के साथ साथ कई परिवर्तन आये। कहीं भूल के कारण प्रसंग छूटते गये और कहीं निजी रुचि और स्थानीय अनुकूल या प्रतिकूल प्रभाव के कारण कई कड़ियां जुड़ती गईं। फिर भी पक्षियों के गीत और सरिता के संगीत की भांति सदा जीवित रहा।

तांईं खै बोलू दरजोदरणा भाईया,
तुमें बौड़ं बोदियौ सरापौ[26]।
केथी देऊ सेजे कुखड़े,
तुभी आणा[27] बै पाण्डू रे बापौ।

शौरी रे बोलू शराइया जौलिया,[28]
शौरें लाये मुंश्रा[29] तु हार्थ।
देंने कि देन्दा था रूपैया,
कि हौयें एकीयें ही पाये[30]।

गोगें री बोलू कमारियें राण्डे,
गोखड़ी खी नें डौरें
नौकली[31] सौइतें[32] गेंलटू [33]तेरें,
गोखड़ी आणदी धौरें।

धौधें री बोलू कमारियें राण्डे,
कंइयौ ओखें रौशौ,
आपू खें कौरें थे थाली मण्गाली,
देवतें देंऐ थे कौशे।

तांईं खै न बोलू ला बेवां भाईया,
तुएं भाईया आगे खी जाओ।
धौटदे लागें शुकदे,
कुन्ता माता जौलमौ रे माओ।

तांईं खे न बोलू ला औरजणा[34] भाईया,
आओं न भाईया आगें खी जान्दा।
पांजूआ आओ ला बाण्डका,
आपणें आन्दें[35] रा कचियें ही खाण्दा।

पांजे न भौड़ीयौ[36] कापडे भाटुआ,[37]
दोगदरौ कौरियौ न वाणौ।
धौर्मी राजें रे देशों दा डेवंला,
तेम्रां ताओं परेंणौ ले करणौ।

हाथे[38] न कौरै ला बांशौ रा बाशला,
मुण्ड़ों उटा[39] काम्बला काला।

अर्थ:—(26) बड़ा बनना (27) लाना (28) ईर्ष्यालु (29) व्यंग में 'मर न गया' (30) अनाज का तोल करने का पीतल या लोहे का डिब्बा जो सवा किलो के लगभग होता है (31) नकुल (32) जैसे (33) गवाले (34) अर्जुन (35) अपने भाग का (36) पहनना (37) बड़े आदमी का पुत्र (38) हाथ (39) नीचे।

ताँई खंन बोलू ले बैंवां भाईया,
दाड़ी जाउले कैंसौ रे बान्दे ।
चाम्बे खाउलैं कुखड़ू,
डूई भाई रें दोरजे ताहरे जान्दे ।

बिल्लियँ बोलू बरालियँ देइया,
सेजे की बाजियं न ताम्रों ।
चाम्बे खायं ले कुखड़े,
ताम्रों गुशु[19]वो थांउटू [20]लाम्रों ।

बिल्लिलये बोलू बरालिये देइया,
शूठ नेरं पीरणाटू रे घाचे ।
बीजौ रे खायं ईयों कुखड़ी,
भौरी लाये फलेवणे खी राचे ।

ताँई खं न बोलू ले बंवां भाईया,
दाड़ी जाउले कैंसो रे बान्दे ।
बीजौ रे खाउ ले कुखड़े,
दूई भाई रे दोरजे ताहरे जान्दे ।

बिल्लियं बोलू बरालियं देइया,
सेजे की बाजिये न ताम्रों ।
बीजौ रे खाये ले कुखड़े,
ताम्रो गाशुम्रो थाउटू ला म्राम्रों ।

बिल्लियं बोलू बरालिये देइया,
तुऐ बौड़ं बोंदियौ [21]सतूरो,
कि दे मेरे कुखड़े,
कि छोड़ मुखी म्रोयणा [22]पूरो ।

ताँई खं बोलू दरजोदणा भाईया
तान्दा भाईया गोम्रा सौ डोरं ।
केथौ देऊ कुखड़े,
मुने देऊ ला चान्दियो [24]मोरे ।

ताँई खं बोलू बंवां भाईया,
दाड़ी जाऊ ले केसौ रे बान्दे ।
सुने चान्दी रे कुखड़े,
ऐं भाईता म्रागु न फलैंन्दे[25] ।

म्रर्थः–(18) क्या गर्ज पड़ी (19) तुम्हारे ऊपर की (20) निपटना (21) बनना दिखावा (22 हस्तनापुर (24) मढ़ना (25) फलना फूलना, फैलना

लातौ केथौ दु दरजोदण,
पोरू होले पाणाटे पौ गाड़े।
सोरमो खोइन्दे धौमीं राजे रे,
शीरे दीन्दा पाणीयें झाड़े।

भालू री बोलू ला भालणो,
तुई मेरे बाइणौ माश्री।
मौंशी चारू धौमीं राजे री,
आगे रो मेरो गोशटू जलाये।

धौमें न बोलू ले राजिया साईबा,
तेरो जाला धौमीं पाला [53]।
ठारो ठाकरी बाईरा राजा भात दूध झीमौ लै,
तेरा मैशाला भूखियैं ही चाला।

बेटे ने बोन्दौ ले शीरौ बेईया,
आपड़ो धौरी ले नाश्रौं।
लिखे चांई थें बौरमें[54] बिशणु खी,
पांजौ लिखे चांई थे पाण्डू खी आश्रौं।

ऊबा न पाड़ा शीरा[55] बेटियें,
ताकलू[56] माईया जीणो फीरो।
उल्टा पौडेगा शीरा,
तेसी पौड़ा मैशालें रै शीरै।

बट ने बोन्दो ले शीरौ बेईया
आपड़ो धारौ ले नाश्रौं
लिखे चाई थे बौरमें बिशणु खी
पांजो लिखे चाई थे पाण्डू खी आश्रो।

उबा न पाड़ा शीरा बेटिये
ताकलू माईया जीणो फिरी
चीजो गई मी शीरा
ऐसी पोड़ा मैशाले रे शिरी।

एकौ न लाश्री ले लातै थावै,
एकौ लाश्री ले जानूबें ओ घुन्ड़े।
दूजी बौई भी शीरा,
तेरी पौड़ा मैशालै रे मुन्ड़ै।

अर्थ—(53) खाली या व्यर्थ, (54) ब्रह्मा, (55) सेहरा, (56) ऊन कातने के तकले की प्रकार का।

धौर्मी राजं रं देशों दा डेवंला,
धौमीं बोदुवियो[40] राजं रा मेशाला।[41]

धौर्मी राजे रे देशो दा डेवंला,
आपड़ो भाईया धौरियौ न नाओं।
मौंशी[42] चारू धौर्मो राजे री,
बाला बोलियौ डौडलौ नाओं।

बालियं न बोलू ला बारजिया,
ताओं लागे सौइते परीतो।
आगं आथा लौड़दा[43],
घोटं फिरे महीने खी चीतो[44]।

बेलूआ तौ बोलू बढ़ालुओ जौलियौ,
नाईं कौरियौ आगे रे आशौ
डौंस आयेगी गुजरौ,
भुजे खान्दो भुजियौ मासौ।

बेलूआ तौ बोलू बढ़ालुओ जौलियौ,
ईयों आगे शिगे तुएं रौओ[45]।
डौइंसौ आयेगो गुजरौ,
कि आयेगं औरजणौ कि बेंओ[46]।

खोली[47] रे बोलू खलाईता[48] जौलिया,
तुई मेरा धौर्मो रा भाये।
मौशी चारू धौर्मे राजे री,
आगे रो मेरी गोष्टु[49] जलाये।

जेती आओ लं भौडवं धुडवं,
भाये भाये बोदियौ लं साथौं।
मौउलौ सौमडो[50] धौर्मो राजे रो,
आग न महारे गोशटु दे टापौ[51]।

पौलगौ गाशुवे राजिया साबा,
तेरे सलामतौ पागौ[52],
मौशी चारू धोर्मे राजे री,
चुल्ले भौरी दे गोशटु दे आगो।

अर्थः–(40) दिखावा (41) भैंस चुगाने वाला (42) भैंस (43) तलाश करना (44) याद (45) बुझाओ (46) भीम (47) मुख्यद्वार (48) द्वारपाल (49) छोटा गोबर का ओपला (50) कम हो जाना या समाप्त हो जाना (51) पूरा होना (52) पगड़ी।

कुंकुवं[66] भामरं रे सायरं[67] छाड़े
डूगरं होला डुगरियों[68] सूतौ।

एकी न शांवली खं बाकरं देश्रौ ले,
दूजी देश्रौ शांवली खे पाठे[69]।
धूपौ रे कोरियौ धुड़सौ,[70]
गौटिया मेरं श्राश्रौ ले गांठं ।

नाराणौ रा हौयैला भाणज़ा,
कुन्ते माउंसी रा खाली रा झौंड़ा।
राते न डैवियौ चोरवियो,
धारौ हुईयौ बठासणो[71] री खौड़ा

नाराणौ रा हौयंला भाणज़ा,
श्रौरजणौ मेरो सौ नाश्रौ।
राते न डेवन्दा चोरवियौ,
ठारे उठू नगारची श्राश्रौ।

गौणदा न लागेगा बौसुश्रा बामणा,
गौणियों धाश्रौ ले कौलौ ।
पौरा हौन्दा न कमरदानू रै
हीरवं[72] श्रागीयौ देवी रा दोशौ।

गौणादा न लागेगा बौसुश्रा बामणा,
गौणियों छाड़यै न कौलौ ।
पौरा हौन्दा न कमरदानू रा,
पांजौ मांगौ लै पाण्डू रे बौलौ[73]।

छौई न महीने हाण्डो[74] झाली झाखड़ो[75]
छः महीने घासणो रो घासौ ।
बेड़ा[76] हाडुंवा रागसी रा,
मुन्दा[77] चौंश्रा[78] रागसी रा वासौ।

बैवां दंश्रो कुन्तिया बेगड़ं राड़ो,
श्रोरी खं दंणी मांसौरी मुन्दे जन्डं[79] हाडौ।

---

(66) बिच्छु बूटी घास (67) घास का बिछोना (68) खुरांटे मारना (69) छोटी बकरी (70) जिसमें देवता को पूजने के लिए धूप जलाया जाता है (71) बठासन-जङ्गल में कुपड़ चोटी से नीचे जंगल में एक स्थान का नाम (72) हिरमा अथवा डिडिम्बा सम्भवतः कुल्लू की देवी (73) बलि (74) चलना (75) जंगल (76) महल (77) मेरे को (78) रूठ जाना (79) जबरदस्ती थोंपना या देना ।

औरियौ पारियो दू आडूवं दईया
लाम्बी लाई लावली धाओ
नोखो पोड़ेगो मीरगो
हौरे भारे दशाराणो खाओ।

कि भी उचड़ी शाठ काल़कं
कि हिन्दू रे आसणा दू राज़ा।
कंनं बोलदा दुणं ताजीआ,
का डेवा ऐ चौतरा रा बाजा।

रोतिया न बोलू ला गाडेआ[57] मेरिया,
केयं घौटे पौख़ू पराणो[58]।
ठारौ ठाकरी बाईरा राजा हेडं खी,
इन रे भौलिया कौरदा न गाणौ[59]।

नांई तो उचड़ी शाठ काल़कं,
नाई हिन्दु रे आसणौ दू राजा।
माह़रे दसासणं धाणाके बायें सौ,
तेरी ऐजा धौणकी [61] रा बाज़ा

नाईं तो उचड़ी शाठ कालका,
नाई हिन्दू रे आसणो दू राज़ा।
पांज़ पाण्डू केथियौ रौन्दे थे,
ओरजणौ जोदे री धाणकी रा बाजा।

झालवी[62] हौली छेबड़ी[63] देईंया,
झालवी तुवं लाओ ली बातो
हीज पौ खाओ जूठो, निठो,
आज़ पौ पूछो गोत्रो ज़ातौ।

एकौ बोलौ बोरमा बिष्णु,
एकौ बोलौ मुगलों बठाणौ।
औथणपूरे[64] फाण्डीयं,[65]
महारे रोयं न गोत्रौ रे गणौ।

झालवी हौली छेवड़ी देईया,
झालती तुवं लाओ ली बातौ।
ऐबी न नाइन्दे बौरमा बिष्णु,
एंबी हौले बौडड़ं रातौ।

कौसरा हौला माणजा जोदेया,
कौस हौला आमें रा पूतौ।

---

(57) गैण्डा (58) पंख प्राण (59) परवाह (60) द्रोणाचार्य (61) धनुष (62) झल्ली, पागल (63) औरतें (65) पहाड़ों में मुस्लमानों को फाण्डीया कहते हैं।

कुंकुवें[66] भामरें रे सायरें[67] छाड़े
डूगरें होला डुगरियौ[68] सूतौ।

एकी न शांवली खें बाकरें देश्रौ ले,
दूजी देश्रौ शांवली खे पाठे[69]।
धूपी रे कोरियौ धुड़सौ,[70]
गौटिया मेरें श्राश्रौ ले गांठे ।

नाराणौ रा हौयेंला भाणजा,
कुन्ते माउंसी रा खाली रा झौंड़ा।
राते न डेंवियौ चोरवियो,
धारो हेंईयौ बठासणो[71] री खोड़ा

नाराणौ रा हौयेंला भाणजा,
श्रौरजणो मेरो सौ नाश्रौ।
राते न डेवन्दा चोरवियौ,
ठारे उठू नगारची श्राश्रौ।

गौणदा न लागेगा बौंसुश्रा बामणा,
गौणियों धाश्रौ ले कौलौ ।
पौरा हौन्दा न कमरदानू रें
हीरबें[72] श्रागीयौ देंबी रा बोशौ।

गौणादा न लागेगा बौसुश्रा बामणा,
गौणियों छाड़यें न कौलौ ।
पौरा हौन्दा न कमरदानू रा,
पांजो मांगौ लै पाण्डू रे बौलौ[73]।

छौई न महीने हाण्डौ[74] झाली झाखडौ[75]
छः महीने धासणो रो धासौ ।
बेड़ा[76] हाडुंवा रागसौ रा,
मुन्दा[77] चौंश्रा[78] रागसौ रा वासौ।

बैवां देंश्रो कुन्तिया बेगड़ै राड़ौ,
श्रोरी खें देंणी मांसौरी मुन्दे जन्डें[79] हाडौ।

---

(66) बिच्छु बुटी घास (67) घास का बिछोना (68) खुंर्राटे मारना (69) छोटी बकरी (70) जिसमें देवता को पूजने के लिए धूप जलाया जाता हैं (71) बठासन-जुब्बल में कुपड़ चोटी से नीचे जंगल में एक स्थान का नाम (72) हिरमा अथवा डिडिम्बा सम्भवतः कुल्लू की देवी (73) बलि (74) चलना (75) जंगल (76) महल (77) मेरे को (78) रूठ जाना (79) जबरदस्ती थोंपना या देना ।

औरियौ पारियो दू आडूवं दईया
लाम्बी लाई लावली धाओ
नोखो पोड़ेगौ मीरगौ
हौरे भारे दशाराणो खाओ।

कि भी उचड़ी शाठ कालकं
कि हिन्दू रे आसणां दू राजा।
कंनै बोलदा दुणं ताजीआ,
का डेवा ऐ चौतरा रा बाजा।

रोतिया न बोलू ला गाडेआ[57] मेरिया,
कथं घौटे पौखू पराणो[58]।
ठारौ ठाकरी बाईरा राजा हेडं खी,
इन रे भौलिया कौरदा न गाणौ[59]।

नांई तो उचड़ी शाठ कालकं,
नाई हिन्दु रे आसणौ दू राजा।
माहरे दसासणं धाणाके बायें सौ,
तेरी ऐजा धौणकी [61] रा बाजा

नाईं तो उचड़ी शाठ कालका,
नाई हिन्दू रे आसणो दू राजा।
पांज पाण्डू केथियौ रौन्दे थे,
ओरजणौ जोदं री धाणकी रा बाजा।

झालवी[62] हौली छेबड़ी[63] देईया,
झालवी तुवं लाओ ली बातौ
हीज पौ खाओ जूठो, निठो,
आज पौ पूछो गोत्रो जातौ।

एकौ बोलौ बोरमा ब्रिष्णु,
एकौ बोलौ मुगलों बठाणौ।
औथणपूरे[64] फाण्डीयं,[65]
महारे रोयं न गोत्रौ रे गणौ।

झालवी हौली छेवड़ी देईया,
झालती तुवं लाओ ली बातौ।
ऐबी न नाइन्दं बौरमा बिष्णु,
एंबी हौले बोडड़ रातौ।

कौसरा हौला माणजा जोदेया,
कौस हौला आमें रा पूतौ।

(57) गण्डा (58) पंख प्राण (59) परवाह (60) द्रोणाचार्य (61) धनुष (62) झल्ली, पागल (63) औरतें (65) पहाड़ों में मुस्लमानों को फाण्डीया कहते हैं।

एक न नग्नौड़ा [88] माग्नौ बापौ र,
दूजा नग्नौड़ा बौइबा तेरा ।
च्‌ीजा नाउड़ा भीमसणो जोदे रा,
से हौ था देवरौ मेरा ।
नाउड़ा दीन्दे ने रागसौ रा,
जीवड़ा चौकां ऐबीयै खा मेरा ।

उबे न जाये कुन्ता देवती,
हारो[89] तौबें देग्नौ बचारौ ।
धौमों रे हौउले पौड़ो[90],
सुके ग्राग्नौ ले दूदू [91] दे धारौ

एक न धारौ दूये कुन्ते,
उटें चाले गीडकियो [92] नाल्‌ौ [93]
दूजे धार दुये दूवौ रे,
हालौ[94] तौबें भौरियें कयारौ ।
चीजे धार दूये दूदौरे,
बालू रे ग्रालियौ [95] बावशे खारौ[96] ।

चौन्दो न रून्जौ ले सूरजौ देईयां,
बीस्तौ पौरु रून्जौ ले माटे ।
एक जाणियौं इणो,
इयों राण्डो ला चाडे दे पछाटे

पाले रा न लायौ जोदिया पौइंसा,
खातौ[97] रा[98] सौमड़ो ला कोदा ।
कुल्‌क्षेत्रौ[99] रें नाहणौ, खी
बेंग्नों पुछा भी ग्रोरजणौ जोदा ।

हाथ न लात काटौ राण्डौ रे,
पौरू काटौ दाईणे बाग्नौ ।
पाण्डू रे लागे दोरदा,
इयौं रे कौरौ था मीमसणौ वेंग्नौ ।

घाटी न गौरी नीकल्‌ा दूणा नारजे,
लाम्बी लाई लावल्‌ी धाग्नौ ।
ग्रारजणा बोलू चेलिया,
शिगा शिगा मीलौ खी ग्राग्नौ ।

---

(88) नाम (89) हार-विचार (90) धर्म का स्थान (91) थन (92) गरज कर (93) खड्डनाला (94) बाड़ (95) गून्दना (96) कोई 16 मन के लगभग ग्रनाज का भार (97) खाता या भण्डार (98) समाप्त (99) कुरुक्षेत्र ।

बैवां इंग्रों कुन्तिये बेगडै राडा
धुन्धु ऐणं रैंड़ो[80] दा मेरा बांगणा[81] चोड़ा।

बाटी[82] रे बोलू बटाणुग्रा[83] देईया,
तूई गोग्रा बाटौ दू भूले।
इन्नी दो निग्रों तेरो बेरोन्दड़ू,
जोगी दो रौग्रो ऐ शेरणे फूले।

दूरबटी ने बोलू कौनिया देइया,
घुरौ घौरो पीरो रे नाग्रों।
झांगणे खी ग्राणु ला ग्रोरकै,
ताग्रों बंऊ ला ग्रापुखी ग्रांग्रों।

एक न नाउडा[84] मांग्रो बापौ रा,
दूजा नाउड़ा दौइबा तेरा।
चीजा नाउडा ग्रौरजणे जोदेरा,
जे साथे मौरने जीवणे रा सखेरा।
नाउड़ा दीन्दे न रागसौ रा,
जीवड़ा चौंका ऐबीयं खा मेरा।

शाठ न कौरुवै बाकरी चारी,
पांजे चारे पाण्डूवै गोरू।
कि सारा होग्रा न जिक्यौरा, 85
ग्राज दीणे झागणे खी जोरू।

दरबेटी ने बोलू ला कौनयां देईया,
नांई लाये मौडै दे घाग्रौ।
साथी जायेगी हाथौ री घाणकी,
बानी ग्रौन्दी रौयगी थामौ दी बाग्रो।
जोबं हौन्दा ग्रौरजणा नीखणा,
तेरी तांई लान्दा ग्रापणे शाग्रौ।

दूरखटी ने बोलू कौनिया देइया,
गुंरौ[86] घौरो पीरो रे नाग्रों।
झांगणे खी ग्राणुला ग्रोर[87] कै,
ताग्रों बंऊ ला ग्रापुखी ग्राग्रों।

---

(80) गुफा (81) टांग (82) मार्ग (83) यात्री (84) नाम (85) जीने का (86) गुरु (87) दूसरे।

कुण न खाश्रौ ला डाली शगोतरू
कुण खाला बानों[106] रा बीड़ा ।
कुण जोदा मेरी फौउजौदा,
भीमसणो खी मामलै[107] खी भीरा[108] ।

श्रांई न खाउंला डाली रे शगोतरू,
श्रांई खाउला बानों रा बीड़ा ।
श्रांई जोदा तेरी फौउजौदा,
श्रांई भीमसणो खी मामलै खी भीरा ।

घाटी[109] गौरी[110] निकला निचौ रा चौणुश्रां,
लाम्बी लाई लावली धाश्रौ[111] ।
पाण्डू रे बोलू पुत्रौ,
शींगै शींगै मामलै खी श्राश्रौ ।

पाण्डू रे बोलू पुत्रौ,
शींगै शींगै मामलै खी श्राश्रौ ।
जोबै नाई श्रान्दै मामलै खी,
कुन्ते राखु ला ज़ारमौ री माश्रौ ।

भौटुवै न गौये बटालवे[112] देवतीयौ।
कि फाटेयौ भौईकौ काश्रौ ।
कुण जोदा गौरी घाटौ दा,
कुन्ते राखौ ला ज़ौरमौ री माश्रौ ।

भौटुवै नाई बटालवै बेटीया,
नाई फाटिये भौईंकौ काश्रौ ।
घाटी गौरी निचौरा चौणुश्रा,
मुश्रौं देखियौ चोउथा ठौणका[113] श्राश्रौ ।

तांई खे बोलू ला श्रौरजणा भावां[114]
दाड़ी जाउला केसौ रा बान्दा ।
कुण जोदा गोरी घाटौ दा,
एखी[115] श्राश्रौं था मानलै खी जान्दा ।

तांई खे ने बोलू ला बैवां काकुश्रा,
दाड़ी जाऊ ला केसौ रा बान्दा।

---

(106) बैंगन (107) लड़ाई, युद्ध (108) दौड़ा (109) तंग (110) घाटी (111) श्रावाज (112) भ्रष्ट होना (113) ज्वर (114) बाहुबल वाला (115) इस को।

ताईं खे न बोलू ला ग्रौरजणा वलिया,
होये कौरी दाती रे कौल्रो।
शेतें कुण्णे पांज मायें पाण्डुकें, 101
श्रामुं भी डेंलनी[100] देश्रौ देटी रा मौलौ[101]

बुशौ न लाश्रो ला दूणा तारजे,
एं मेरा तोलणी तोलौ,
काण्डु श्राणडे कागणी[102],
मेरे श्राये ने जोडं रो मोलौ[103]।

काण्डू श्राणडं कागणी मेरिया,
माणकौ श्राणडं मोते।
दूणीया बोल तारजिया,
मूखी श्राणीयो झौगड़ा दोते।

दौखणीये राजे खी कागलें लखाउणे,
दौखणीये राजिया धावड़ी खी श्राणें।
झीशी श्रायें भौलुकें राण मयाणें,
घोड़ा जोड़ा कौरणा तीर कमाण।
धाडीयें घुघरूवें मौरी झणकार,
कुन्नुवें कौथरीयें मौरी मसकार।

केयौ नाश्रौ दरजोदणे कुरुछेत्रौ नाणो,
उतरीये नाश्री दरजोदणे नाणो।
पुर्वीय नाश्री दरजोदणे नाणो,
पश्चिमीये नाश्रौ दरजोदणे नाणो।

भेडुश्रा बोलू पुत्रा साहीब,
नाहणौ हौला तु नाहन्दा चाला,
नाहण कंयौ रो नाहे ला,
छौटे उछड़ा महीलें खी मेंला[104]।

हाथ नाक काटो राण्डो रें,
दाईणे काटौ ले बाश्रौ।
पाण्डू रे लागे गे बोरदौ,
इयौं रा कौरौ था भीमसणो ब्याहौ[105]

---

(100) निकालना, उतारना (101) मैल (102) श्रंगूठी (103) मूल्य (104) तोप (105) ठीक करना।

ओथणा ने पूरे री थण [122] ठौरे,
मुंई बीलो नौदरा [123] लाये
बासु नागा नानियां
मुंई बीलो नौदरा लायें ।

बारजे बोलू आमीयां,
मुंई बीलै नोदरा लाये ।
कुन्ता बोलू नानियें, [124]
मुंई बीलो नोदरा लाये ।

बंवा बोलू काकुआ, [125]
मुंई बोलू काकुआ
औरजणा बोलू बाबुआ,
मुंई बोलू बाबुआ ।

बुरगटी बोलू कोनियां,
मुंई बोलू कौनियां ।
नौकला बोलू काकुआ,
मुंई बोलू काकुआ ।

रून्डीयै बोलू शारीयैं, [126]
खुन्डं रे पोइने जाये ।
राजे झाडे दरजोदणे खी,
लांगे चांई तेसी रे माथैं ।
तेथौ आयें ले होटियौ,
ऐ नीचौ दू भाइयौ [127] न जाये ।

जोदै न ऐजे बोली उम्बरे मेरिये,
औरजणो बाबु रे राये ।
बाण छाड़ो थौ तीणो,
सातो बीणा पाटडी [128] दां पाये ।

कुन्तौ रे जौलौ ला झूझरा [129] देईया,
लबरें [130] जौलौ लै ओठौ ।
वासकू नागौ रा भाणजा,
औथण मेरी भी पूरी रो झोटौ ।

अर्थः (122) देवस्थल (123) नज़र (124) नहीं भाता (125) चालो (126) तीर (127) निशाना खाली न जाये । (128) खेत (129) बालों से बिखरा सिर (130) लम्बे होंठ

कुण जोदा गौरी घाटौ दा,
ऐंखी आश्रौ मामलै खी जान्दा।

सँणवे ने गोयेमैं बुडवे बेटीया,
शीरौ दे झौडे मैं पौलू[116]।
पुत पौरा तैयौ खी धाची[117] था,
ताखे आमें बोले न बौलू

डेवन्दा तौ कैनै डेवन्दा बेटीया,
कुण देग्री ला डेवणे खी नौहरा[118]।
कालौ खी ढ़ाई शौ पौइंसा,
औडै[119] धाची बक्तौ खी पौरा[120]।

घाटी न गौरी लीकला बाला वाईबौ,
लाम्बी लाई लावली धाश्रौ।
कुण जोदा था गौरी घाटौ दा,
कुन्ते राखै था जोरमौ री माश्रौ।

कौसरा न हौयला भाणजा जोदेश्रा,
का तेरा नौगरे गांव।
कौसरा हौयला बेटड़ा,
माश्रौ बोलै बाबु रे नाश्रौ।

बासुके नागौ रा भाणजा मेरीआ,
श्रौथणा मेरी पूरी रो गावौं।
श्रौरजणौ जोदै रा बेटड़ा,
बाला मेरो वाईबौ नाश्रौ।

टोपे न छुटेगे ठाकरौ जोदै रे,
गौले रो छुटैं नशाणौ,
कानौ दू छुटेंगो तुन्नलौ[121]
जुदो पौडौ दाणौ कमाणौ।

नीचौ रे बौलूला चौणवीया,
जाये गोई नौचौ री खोटी।
बाण छाडो थो तीणे,
ठारौ ढ़ालौ बौडौ री बढ़ोटी।

---

(116) सफेद बाल (117) पालना (118) इन्कार करना (119) कठिन समय
(120) पुत्र, पौत्र (121) कान का गहना।

जेरटै लांके र रावणी,
बूरखटी लागौ लै कौनीयै रे भाये ।

दावीये न बोलू ले दमूरिया वेइया,
तेरे पुतले के थीये खाये ।
पाण्डू रे जजो लै पुत्रौ,
हाये कौरं मृतौ रे बाटे[132]

दावीयें न बोलू बमोरिया वेईया,
छौटे फीरे महीनें खौ नीजौ ।
जौता पूरे दोछे[133] वेउला,
शाठें लागौ लो खारीये बीजौ ।

तांई खं न बोलू ले दरजोदणा,
कुणं[134] दो बोविये या बूणा ।
किन्दे किये सं कौटके,[135]
कौणे मुण्डौ उटा मौसमा पूणा ।

राणीयें तो बोलू परमाणटीयै बेईयैं,
कुणे दू बोवुवा था बूणा ।
बंवें खाये मेरे कौटके,
मुंडौ उटा तंणं भौसमा बूणा ।

हिमाचल प्रदेश के विभिन्न भागों में महाभारत के विभिन्न प्रकार के विवरण प्रचलित हैं। अतः इस समय इन के एकत्रित करने की बहुत आवश्यकता है क्योंकि इन के जानने वाले लोग अब बहुत कम रह गये हैं और ये बहुमूल्य साहित्य रत्न सदा के लिये लोप हो जाएंगे ।

—द्वारा गोवर्धन सिंह
हिमाचल प्रदेश सचिवालय पुस्तकालय,
शिमला–2 ।

(132) परात, बर्तन (133) दोगरी, घर से दूर कृषि योग्य भूमि (134) एक (135) कलगी

उबा न बींवजे जा बैंवीआ बेटीआ,
का गाडै ऐ घलरू नीजौ [131]।
नाहण नाहड़ौ कुलू छेत्रौ रो,
पाजौ टालडो पाण्डू रो बीजो ।

खौडा तौ भाजेगँ होइन्द आमीयां,
ऐबै रोयँ न सौरमा लाजौ ।
बारौ ठारौ हौयेगी बौरशौ,
महारे पौड़ो न पटीयौ दो नाजौ ।

उबे न जागे कुन्ता देवते,
हारौ दैंऔले वचारौ ।
धौमौं रे हौले पौड़ौ,
शुकै आओ दूदू दे धारौ ।

एक न धारौ दये कुन्ते,
उटै चालै गोडकियौ नालौ ।
दूजे धार दूड़े दूदौ रे,
वालू रे आलबै बावशै खारो ।

उबा हौयँ बांवीया बेटीया,
लेखै सुता दाखा तीआणा ।
नाहणा नाहड़ो कुलू क्षेत्रौ रो,
थोड़ा जेआ टुकड़ा ताखी चाणा ।

तांई खँ कँ बोलू ला आरजणा भाईटुआ,
तौयँ भाईया खेरा खँआ ।
शाठौ माता कौरू खँ,
भाठौ खे जेआ लाकड़ा पँआ ।

दूरपटी न बोलू कौनिया देइआ,
आरौ तौयँ लौखडँ कयारौ ।
पाण्डू जौणे पुत्रौ,
इनौ आयेगे रावणौ रे हारौ ।

दादीये न बोलू ले दमूरिया देईया,
तेरे पुतले के थीये खाये ।

अर्थः (131) गहरी नींद

स्पष्ट है कि राजा दशरथ-पक्ष के लोगों को गालियां अच्छी लगीं। सुन कर उनका मन हर्षित हो गया। सारा-समाज प्रसन्न था। प्रत्येक का नाम ले ले कर गालियां गाई गईं। हो सकता है जिसका नाम न लिया जा सका हो उसने अपने मन में विचारा हो मुझे क्यों गाली नहीं दी गयी! गाली सुनने का चाव उसके मन में ही रह गया हो।

लोक-साहित्य में ये गालियां अश्लीलता अथवा अतिशयोक्ति का भी रूप धारण कर लेती हैं। ऐसे अवसरों का किसी हद तक यह प्रकरण अशोभनीय भी लगने लगता है। हिन्दी साहित्य में कविवर केशव दास ने इसी परिवेश में राम के पिता दशरथ को सीता जी के पक्ष की स्त्रियों द्वारा 'भू-पति' होने पर व्यंग्य किया। दशरथ 'भू' के पति हैं। 'भू' है बहुपति भोगी! हरजाई!! कितने ही राजा समय-समय पर हुए, इसे भोगा और चलते बने। ऐसी ही हरजाई को दशरथ ने भी वामा के रूप में स्वीकार किया है।, वे कहतीं 'हे राम'! तुम ऐसे ही परदारा भोगी पिता के तो पुत्र हो—

अब गारि तुम कहं देहिं हम कहि कहा दूलह राम जू।
कछु बाप प्रिय परदार सुनियत करी कहत कुवाम जू॥
को गिनैं, कितने पुरुष कीन्हे कहत सब संसार जू।
सुनि कुंवर चित्त दै बरनि ताको कहिय सब व्यौहार जू॥[2]

वह रावरे पितु करी पत्नी तजी विप्रन थूंकि कै।
अरु कहत हैं सब रावनादिक रहे ताकहं ढूंढिकैं॥
यहि लाज मरियत ताहि तुम सों भयो नातो नाथ जू।
अब और मुख निरखै न ज्यों-त्यों राखिये रघुनाथ जू॥[3]

नागर-साहित्य के इन्हीं प्रकरणों से प्रेरित हो कर प्रस्तुत लेख में, मैं कांगड़ा गाली-प्रधान लोक-काव्य को प्रस्तुत करने का लघु प्रयास कर रहा हूं। मैंने यह अनुभव किया है कि यह लोक-काव्य अपने भीतर विचित्र सी आत्मीयता तथा सरसता समाये है जो सामाजिक इकाइयों को एक दूसरे से मजबूती से जोड़ने का उपक्रम ही है। मन के शुद्ध भावों को जो बिना किसी राग-द्वेष से स्नेहिता बन कर ललनाओं के कण्ठ से स्वर लहरियों के रूप में सहज ही फूट पड़ते हैं, इस छोटे से लेख में आकलित करना ही पर्याप्त नहीं है। इसके व्यावहारिक पक्ष की पैठ में जाना शोध की एक दिशा होगी।

कांगड़ा के लोक-समाज में विवाह के अवसर पर गायी जानी वाली गालियों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

---

2. रामचंद्रिका: केशवदास, 6/30.
3. वही: 6/37.

कांगड़ा लोक-गीतों में गालियाँ

—मनोहर लाल

कांगड़ा के लोक गीत-साहित्य में गालियों का अपना विशेष महत्व है। लोकाचारों तथा कुछ विशिष्ट पर्वों पर गाए जाने वाले गीतों में हास्य रस की निष्पत्ति करने के लिए व्यंग्योक्तियों का प्रयोग किया जाता है, विवाह आदि के अवसरों पर इन गालियों के गाने का ही अधिक रिवाज है। ब्रज-प्रदेश में इन गालियों को 'सीठने' कहते हैं।

'गाली देना' कोई अच्छी बात नहीं है। जो व्यक्ति गालियां देता है अथवा खाता है उसे समाज अच्छी नजर से नहीं देखता। इससे तो अपमानित ही होना पड़ता है। इससे चारित्रिक दुर्बलता ही जाहिर होती है। गाली सही ही नहीं जा सकती, चाहे आपका कोई कसूर हो भी या न भी हो किन्तु गाली के कथन में भी अन्तर है। यदि देशकाल के परिवेश में गाली निकाली जाये तो बुरी होते हुए भी वह अच्छी ही लगती है। मान लीजिये आपका आंगन छोटे से बालक की किलकारियों से गुंजारित हो रहा है, उसका दूधिया दान्तों वाला हास तथा घुंघराले बालों वाला मौलिमंडल, हल्के रक्तिम सुडौल गौर-गालों पर लगा काला डिठौना आपके हृदय को मोह रहे हैं और वही सुन्दर बालक अपनी तोतली भाषा में कोई गाली निकाल देता है तो आपको वह गाली भी सरस लगेगी, विरस नहीं। काल-सापेक्षता को ही दृष्टि में रखकर महाकवि वृन्द ने लोक तत्व के इस रहस्य को इन पंक्तियों में व्यक्त किया है—

फीकी पै नीकी लगै, कहिये सम विचारि।
सबको मन हर्षित करै, ज्यौं विवाह मैं गारि[1]॥

इतना सत्य है कि लोक-साहित्य की यह विशेषता नागर-साहित्य में कम मिलती है, पर जहां मिलती है वहां इसकी शिष्टता एवं विशिष्टता अवलोकनीय ही होती है। महाकवि तुलसीदास ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'रामचरितमानस' में लोक-साहित्य की इस विशेषता को अपनाया है। सीता जी के पक्ष की स्त्रियां भोजन करती हुई जनेत (बारात) को गालियां गाती हैं—

पंच कंवल करि जेवन लागे। गारिगान सुनि अति अनुरागे॥
जेंवत देहि मधुर धुनि गारी। लै लै नाम पुरुष अरू नारी॥
समय सुहावनि गारि विराजा। हंसत राऊ सुनि सहित समाजा॥
एहि विधि सबहीं भोजनु कीन्हा। आदर सहित आचमनु दीन्हा॥[1]

---

1. वृन्द सतसई: कवि वृन्द, दोहा 5. लक्ष्मी वैंकटेश्वर प्रेस मुंबई, संवत् 1980
1. रामचरित मानस: तुलसीदास—बालकांड, छंद 328.

'कुदा छल्लिश्रा तूं बाम्मण श्रैयां,
कुदे बेड़ें जाणा ऐ ।'

(तू ब्राह्मण किसका भेजा हुआ आया है और किस के बेड़े जाना है ?)

'कुड़मा दा घल्लेश्रा मैं बाम्मण श्रैया,
कुड़मा दैं बेड़ैं जाणा ए । '

(कुड़मों का भेजा हुआ ही मैं आया हूं और कुड़मों के घर ही मुझे जाना है।)

इस ब्राह्मण का जी भर कर स्वागत करके, दक्षिणा दे कर लौटाया जाता है । लोक-गालियों में औरतें दक्षिणा के रूप में भैंस, गाय, थाल आदि अनेक वस्तुओं का उल्लेख करती हैं कि इनको दक्षिणा के रूप में स्वीकार कर लो । पर वह एक रट लगाता है कि इन सब चीजों को लेकर मैं क्या करूंगा ? इन्हें संभालने वाली पत्नी ही जब मेरे घर में नहीं है । कौन संभालेगा इन्हें ? उसके इतना कहते ही कुड़मणी को दक्षिणा के दाव पर लगा दिया जाता है और साह लेकर आने वाला ब्राह्मण प्रसन्न होकर स्वीकृति कर देता है—

स्त्री: आ साये दिश्रा बरामणा तूं लै दच्छणा ।
बूरिया मेंई दा दान करानियां तू ल दच्छणा ।।

ब्राह्मण: नी मैं छड़ा नी जजमानणिये, मेरा चोंका सुन्ना,
मेरा कुण मेंई जो दुग्गे ?

स्त्री: कुड़मैं दिश्रा जोरो दान करानिश्रां
तू लै लैं बराम्मण दच्छणा ।

ब्राह्मण: नी मैं राजी नी जजमानणिये
मेरा चौंका होइया सुहाया
ऐ दे दे दच्छणा ।'

ब्राह्मण की इस स्वीकारोक्ति पर अपनी 'सरीकणी' को उसके लड़ बांध देना उन स्त्रियों का अपमान नहीं तो और क्या है ? वे उसे गीत के माध्यम से फटकारती हैं। फटकार से भला उसे क्या प्रयोजन ? वह ज्यों ही दक्षिणा लेने आगे बढ़ता है आंगन में चिक्कड़ (कीचड़) होने के कारण फिसल पड़ता है उसके कुछ मर्म स्थलों पर अच्छी चोट लग जाती है । वे इसी प्रसंग में उसका उपहास करती हुई गाती हैं—

भलां जी, किसे दिश्रा बाम्मणा,
भलां जी, आई बैंठा साम्मणा ।
भलां जी पानी वुट्ठा ठांगणा,
भलां जी तिलकी पिश्रा अंगणा ।
भलां जी चथोई गिश्रा ठप्पणा,
भलां जी चंगी मिल्ली दच्छणा ।

1. सांद (शान्ति पाठ) की गालियां:—सांद-संस्कार पुरोहित की ओर से ग्रहों की शान्ति तथा जीवन के मंगलमय बनने के लिए किया जाता है। इस समय कन्या एवं वर दोनों ही पक्षों म मामा की उपस्थिति अनिवार्य होती है। वर तथा कन्या मामा के घर के लाये हुए वस्त्र धारण करते हैं। मामा इस अवसर के लिए पूरी साज-सज्जा तथा रोब के साथ पधारता है। मामा पर व्यंग्य करते हुए स्त्रियां गालियां गाती हैं—

'मामा आया बण ठण के, सूट लिआया मंग शुंग के।
सूट तेरें आब नहीं, क्या मामा तिज्जो लाज नहीं ॥'

अर्थात् मामा पूरी तरह बण-ठण कर आया तो, पर सूट मांग कर लाया है। सूट की सुन्दरता भी नहीं है, क्या मामा तुझे शर्म नहीं आती ? इसी परिप्रेक्ष्य में मामा के सारे वस्त्रों को कोसा जाता है—

मामा आया बण ठण के, टोपी लिआया मंग शुंग के।
टोपिया तेरिया आब नहीं, जुड़ा दा कोई ह्साब नहीं ॥

सांद के समय सारे सरीक तथा सम्बन्धी लड़की तथा लड़के के सिर पर तेल डालते हैं। नाई तेल का डूना (दोना) लिये पास खड़ा रहता है और लोग दूवा से तेल सिर पर छिड़कते जाते हैं। बदले में दोने में दो-दो चार पैसे डाल दिये जाते हैं। जो-जो आदमी तेल डालता है उसका नाम अथवा सम्बन्ध बता कर उसे गालियां गाई जाती हैं। इस समय पर भी मामा की ही अधिक खाल उधेड़ी जाती है। मामा को गाली गाई जाती है—

मामैं पैया तेल मुइये मैं तेरी सौं।
ओरनैं पैया धेला पाई, मामे पाई माई।
नाई परोत लेई नैं नठे, अदो अद्द बंडाई।
नैण परोतणी खुशियां मनान, घरे जो गोली आई।

कटूक्ति है कि जब औरों ने नाई के दोने में पैसे डाले तो कंजूस मामा ने पैसे तो बचाये पर बदले में मां की बाजी लगा दी। जिसे लेकर नाई और पुरोहित दोनों भागे और उस पर अपना-अपना हक जतलाने लगे, नाईन तथा पुरोहितिन खुशियां मनाने लगीं कि काम करने को नौकरानी तो आई !

इस गाली में मामा की कृपणता का संकेत करके उसका अच्छा उपहास किया गया है।

2. साह-ब्राह्मण की गालियां:—कन्या पक्ष की ओर से विवाह की अन्तिम स्वीकृति ले जाने वाले ब्राह्मण को वर पक्ष की औरतें भी खूब आड़े हाथों लेती हैं। ज्यों ही ब्राह्मण वहां पहुंचता है स्त्रियां संवादात्मक शैली में गाली गाती हैं—

3. जणेत की गालियां—कांगड़ा में ज्यों ही जणेत कन्या पक्ष के घर की ओर चलती हुई गोर(गो+राहा) में पहुंचती है तो औरतें ब्याजस्तुति के परिवेश में गाती है :—

बज्ज वे शह्नरिया, बज चीरे बालिया । बावल बेड़े बज्ज वे ।
जे तुसीं आये वज्जदें बाजें । अग्गें तां साड़े उच्चे दरवाजे ॥
जे तुसी लांदिया लौंगां दिआं पुड़ियां ।
अग्गें तां साड़ें सहैरां दिआं कुड़ियां ।

जे तुसीं लांदियां जोरो दियां घघरियां । अग्गें ता साड़ें उच्चियां अटरियां ॥
जे तुसीं लांदियां पित्तलां परातीं । अग्गें ता साड़ियां उच्चियां जातीं ॥
जे तुसी लिआये बज्जदे नगारे । अग्गें तां साड़े मुंडे कुआरे ॥

जिसने लड़की दे दी उसने अपना सब कुछ दे दिया ऐसा अक्सर कहा जाता है । रहस्य इससे परे है । लड़की दे देने से वह लड़के वालों के सामने सदा के लिए झुक गया तो ठीक है पर टूटा नहीं । इसी लिए लड़के वालों से अपनी तुलना करती हुई वे अपने को छोटा या खोटा नहीं बताती हैं। जनेत की रूपसज्जा पर भी व्यंग्य करती हुई वे कहतीं हैं :—

"बाज्जां आले आये शहनरिया बाजा दें हत्थ तोते ।
छूई हार परोते शहनरिया, छूई हार परोते ।
बाज्जां दें गल् पाये शहनरिया बाज्जां दें गल् पाये ।
फुल्लां हार परोते शहनरिया, छैलां दें गल् पाये ।"

अर्थात् बाजों की स्वर-लहरियां विकीर्ण करती हुई जणेत आ गई है । इसके गले में छू (कैकटस) के हार डालकर स्वागत किया जा रहा है क्योंकि इनकी रूप-सज्जा इसी के अनुरूप है । फूलों के हार तो हमें अपने ही छबीलों के गले में डालने पड़ रहे हैं । ये फूलों के हारों के योग्य हैं ही नहीं तो ।

4. धाम की गालियां—पुराने जमाने में कांगड़ा में बारातें कम से कम तीसरे या चोथे दिन लौट कर जाया करतीं थीं । रिश्ते दूर-दूर हुआ करते थे । दो तीन दिन थकान उतरने में लग हीं जाते थे । अब तो दूसरे ही दिन का रिवाज हो चला है । धाम (भोजन) खाते समय गालियों के गान का उल्लेख 'मानस' में भी मिलता है जिसका जिक्र मैं लेख के आरम्भ में ही कर चुका हूं । कांगड़ा में बराती आये हुए लोगों में दोष-देखती हुई औरतें उन्हें लूला लंगड़ा, बहरा, अन्धा या बूढ़ा बता कर उनकी निंदा करती हैं । अजब यह है कि इन बातों का कोई बुरा नहीं मनाता । षट् व्यंजनों का रस रसना लेती है तो गालियों में जो विशेष रस प्रवाहित होता है उससे कान तृप्त होते हैं:—

चंदे लसमस लाई, तारा कोई कोई ऐ ।
जंज बुढ्ढियां दी आई, गबरू कोई कोई ऐ ॥

अर्थात् यह किसका ब्राह्मण सामने आ बैठा है ? आंगन में पानी गिरने से जो कीचड़ हुआ था उस पर इस का पांव फिसल गया है । इसे बड़ी अच्छी दक्षिणा मिली है ! और इतना ही नहीं दूसरे की बीबी मिलती देख कर उसके मुंह में जो पानी भर आया था अथवा यों कहिए उसने जिस लोलुपता का परिचय दिया था उसी सन्दर्भ में उससे उसकी पत्नी को मांग उन नौजवान छोकरों के लिए करती है जो लाहौर से छुट्टी लेकर विवाह में शरीक होने आये हैं—

बाम्मणा तू खा लैं जाम्मणा, बाग दिआं जाम्मणा सुआद मिट्ठियां ।
अपनी जोरों सांजो देई दे वे, दूरों लहौरों मुंडिया लेइयां छुट्टियां ।।
चौं घट वाली मुल्ल लैं लैं वे, तेरी जोरो दिआं जाम्मणा सुआद मिट्ठियां ।

अर्थात् हे ब्राह्मण ! तू जामुन खा ले, बाग के जामुन बड़े मीठे हैं । अपनी स्त्री हमें दे दे, हमारे गबरू लाहौर से छुट्टी ले कर आये हैं । तू अपनी जोरो का 36 रुपये मूल्य ले ले । तेरी जोरो के जामुन बड़े मीठे हैं ।

उक्त गीत की अन्तिम कड़ी में 'जोरों दिआं जाम्मणा' से स्त्रियों का तात्पर्य 'कुच-चुम्बन' से है । पूरे गीत में ब्राह्मण की स्त्री से रति व्यवहार करने की बात दुहराई गयी है । क्या करे बेचारा, परिस्थिति वश उसे यह भी सुनना ही पड़ता है । परिवाद न करके मौन ही रहना पड़ता है। यदि इतना कह कर भी उसे मुआफ कर दिया जाये तो भी गनीमत है । अब तो कुड़म की जोरो की भी शामत आ जाती है । उसके चरित्र पर लांछन लगाती हुई वे उसे हरजाइयों के कटघरे में ला खड़ा करती देर नहीं लगातीं और न ही हिचकती हैं —

'कुड़में दिया जोरो चार सद्दे, चौदह आये ।
दू दें हत्थें तूम्बें, दो मग खिलांदे ।।
दू दें हत्थें तौए, दो पोलू पकांदे ।
दू दें हत्थें पक्खियां, दो बात झलांदें ।।
दू दें हत्थें गड़वे, दो नीर भरेंदे ।
दू दें हत्थें छतियां, दो छौंह करांदे ।।
दू दें हत्थें दीवे, दो लो करांदे ।
दू दें हत्थें कड़छियां, दो दाल परींदे ।।'

स्पष्ट है कि उसने अपने जिन चार यारों को अपने पास आने के लिए बुलाया था उनके साथ-साथ दस और आ गये जिनमें थे भिखारी, रसोइये, झीर, नाई तथा मशालची आदि । यह गाली बताती है कि वेश्या का कोई धर्म-ईमान नहीं होता । उसके शरीर का सौदा करने तथा अपनी काम पिपासा शांत करने के लिए छोटी-बड़ी सभी जातियों के लिए उसका द्वार सदैव खुला रहता है । मूलत: इस गीत में लोक कवयित्री मलाशय लोक-मंगल की भावना का चित्रण ही है ।

कड़छी दा खून हो गिया, चलिया मुकदमा भारी ।।
जीजे दी मां लग्ग गेई, साड़ी खोटी चुग्रन्नी सारी ।।'

अगर गालियों की मूसलाधार वर्षा यहीं तक सीमित रहे तब तो गनीमत है । औरतें तो लगे हाथ उसे प्रतीक मानकर पूरी बारात को पेटू तथा भूखा करार दे देती हैं । ऐसे भखे कि पत्तलें भी न छोड़ सके, चाट चाट कर छेद करते भी न शरमाये—

अंग्गण साड़े कूंजी, पेई कूंजी ऐ ।
जीजे भत्त बी खादा, दाल बी खादी, पत्तल लेई पूंजी, पेई पूंजी ऐ ।
अंग्गण साड़े टींडा पेई टींडा ऐ, पत्तली कीत्ता छीडां पेई छींडा ऐ ।
जणेती पत्तली लइयां चट्टी पेई चट्टी ऐ ।

जणेत खा कर हटी कि डूमणे ने नगारे पर चोट दी। नगाड़े की दुड़्-दुड़् के साथ ही सारे जणेतिये अपने अपने गिलास हाथ में लिये उठ खड़े हुए और उठते ही औरतों ने उनकी बोदियों (चोटियों) के साथ पेड़् (अनाज रखने का बांस का बना हुआ बड़ा सारा बर्तन) बांध दिये :—

खाई उठे बचारे, क्या बोलिये ।
खादा पीता रेड़्, क्या बोलिये ?
जणेतियां दिग्रा बोदिया बन्नेग्रा पेड़्, क्या बोलिये ।
खादा पीता थोड़ा, क्या बोलिये,
चुतड़े लड़िया मकोड़ा क्या बोलिये ।

5. जीजे की गालियां.—विवाहों में इन गीतों की वाण-वर्षा वेचारे दूल्हे राजा पर ही अधिक पड़ती है । शायद इसका अभिप्राय है कि अब तो जिंदगी भर खरी खोटी सुननी पड़ेगी और समय तथा परिस्थितियों से समझौता करना पड़ेगा अन्यथा घुटना पड़ेगा । बड़ी मजे की बात है विवाह के अवसर पर छोटी-बड़ी, मटियार तथा जबरियां सब की सब जीजे की सालियां बन जाती हैं, जीजा राजा है कि मस्ती मस्ती में शायद यह विचार लेते हैं: —

"सालियां दीग्रां गालीं, हन दुद्दे घीउए दिग्रां नालीं।"

यहां कुछ गालियां उद्धृत कर देना चाहता हूं जो इस राजा को सुननी पड़ती हैं, निर्धन हो होकर—

1. मेरे हत्थ आ गेई नीं कौल कैंच दी डब्बी ।
   जीजे दिग्रा ग्रम्मा खसम कीते 1, 2, 3, 4, 5. . . . छब्बी ।।
   मेरे हत्थ आ गेई नीं कौल कैंच दी डब्बी ।।
2. **साली** : जीजा । उठी नैं पैंटा जो झाड़, पैंटा च भून्ड बड़ेग्रा ।
   इक्क नी बड़ेग्रां दो नी बड़े, बड़े पंच सत्त चार ।।
   जीजा : रौला मत पा अड़िये, ऐ माऊ मेरिया दे यार ।

चंदे लसमस लाई, तारा कोई कोई ऐ ।
जंज काणियां दी ग्राई, सुरिग्राखो कोई कोई ए । ।
जंज बोलियां दी ग्राई, सुणदा कोई कोई ए ।
जंज जल्लियां दी ग्राई, कुंदा कोई कोई ए ।।

ग्रौर फिर जणेत थोड़ी क्यों ग्राई है ? यह गीत उस समय विशेष बल देकर गाया जाता है जब जणेत जरूरत से ज्यादा ग्रा गयी हो :—

हम लाज गे हम लाज गे जी, जणेतिये थोड़े ग्राये ।
हम समझ गे हम समझ गे जी, गबरू भरती होए ।
हम समझ गे हम समझ गे जी, लाड़े दे सिर लोई ।
हम समझ गे हम समझ गे जी, सरीक न ग्राया कोई ।।

धाम के लिए बैठी जणेत को जब पत्तल, पानी या ग्रन्य दाल सब्जियां परोसी जाती हैं तब परोसणे वाले की ग्रोर शब्द, संकेत करके उसकी कुमारावस्था को ज़ाहिर करती हुई ग्रौरतें बारातियों से उसके लिए लड़की की मांग करतीं हुई गाती हैं :—

पत्तल देणे ग्राला मुन्डा कुग्रारा । इजो दिन्निग्रो भैणा दा सहारा ।
पाणी देणे ग्राला मुंडा कुग्रारा । इजो दिन्निग्रों धीया दा सहारा ।।

जणेत के पश्चात् ग्रब बारी ग्राती है दूल्हे राजा की । ज्यों ही जणेत खाना खाने लगती है विशेष कर चंचल तथा शोख बालाएं गा उठती हैं :—

छोटी-छोटी बुरकी तू पा मेरे जीजा,
सौहरे दी सरम तू कर वे ।
सौहरे दी सरम मैं कियां करां साली ।
भुक्ख लग्गी बड़ी भारी ।

जब गीत की इस कड़ी को सब रिश्तेदारों के सम्बन्धों के परिप्रेक्ष्य में दोहराया जाता है तब बेचारा दूल्हा थोड़ा-सा ही खाकर, खाना बंद कर बैठता है । ग्रपने व्यंजनों की प्रशंसा तथा बारातियों की लालसा की ग्रोर संकेत करते हुए दूल्हे पर एक मुकदमा दायर हो जाने की नौबत भी ग्रा जाती है जिसके खर्च के लिए बेचारे दूल्हे राजा की मां को भी दाव पर लगा, चित्रित किया जाता है । देखिये मुद्दई की केवल चवन्नी ही खर्च होती है ग्रौर वह भी खोटी ग्रौर मुद्दालियां को इतना बड़ा मूल्य चुकाना पड़ता है । वह भी किसका, एक कड़छी के टूट जाने का —

'छोलियां दी दाल करारी, मिर्चा तिरमिरियां,
खा गेई खिलकत सारी, छोलियां दी दाल करारी ।।
जीजा खा के होर मंगदा, कड़छी मुंह बिच मारी ।

के मुंह में भात के कौर डालती है । ज्यों ही सास बहु के मुंह में हल्का सा कौर वात्सल्य भाव से डालती है सरीकणियां गा उठती हैं :—

'अंगणे साड़े बंहजा कुड़मा दिये बेटिये ।
साड़ी पत्तल लै लैं कुड़मा दिये बेटिये ।।
साड़ा खाणा खालैं कुड़मा दिये बेटिये ।
साड़े गोते (गोत्र) रल जा (मिलना) कुड़मा दिये बेटिये ।'
तूं सत्ता दिना दी भुक्खी, गराइयां लै लैं नीं ।
तू माऊ नै घल्ली भुक्खी, गराइयां लै लैं नीं ।
अज्जे दी नी भुक्खी, कल्ले दी नी भुक्खी,
माऊ ढिडे दी ई भुक्खी गराइयां लै लैं नीं ।'

और नवेली छम-छम रोने लगती है । उसकी बडियारी कजरारी आंखों से आंसू लुढ़क-लुढ़क पड़ते हैं, टप-टप-टप ! ! !

8. **रसोइये की गालियां**— विवाह गाने बजाने तथा रोने हंसने के साथ साथ खाने पीने के लिए भी होता है । यह दूसरी बात है कि प्रणय-सूत्र में बंधने वालों को उपवास भी रखना पड़े । मात्र दूध पी कर गुजारा करना पड़े और लाड़े या लाड़ी के बहाने कई लोग दूध भी पीयें और सब कुछ खायें भी । यदि रसोई बिगड़ गई तो सारा मजा किरकिरा । रसोइये थोड़े लालची होते हैं, विविध खाद्यान्नों के लिए अच्छी से अच्छी सामग्री मंगवा लेते हैं और वह भी जरूरत से ज्यादा । उपयोग में उतनी भी नहीं लाते जितनी की आवश्यकता होती है, हां फक्के मारने में कोई कसर नहीं उठाते । अस्तु ! अपव्यय करना उनकी मनोवृत्ति ही होती है । इसी को लक्ष्य करके औरतें गाती हैं ।

'ऐडी देर क्यों लाई वे रसोइया लालचिया !
दूरे ताईं न्यूंदरां गेइयां वे रसोइया लालचिया ।'

अर्थात् रसोइये ने भोजन तैयार करने में इतना अधिक समय क्यों लगाया है । न्योते तो दूर-दूर तक गये हैं । देर लगाने की सज़ा सुनिये—

असैं एहो रसोइया कडाइयो देणा ।
असैं होर रसोइया मुगाइयो लैणा ।

रसोइया लालचिया ।

असैं बाबुलै दें कन्ने पाइयो देणा,
असैं ऐहो रसोइया कडाइयो देणा,

रसोइया लालचिया ।

कुल पंच सत्त चार, होइया तिसां नैं प्यार ।।

3. **साली**: 'जीजा जुड़ी गिया मंजे नाल, मंजा तेरा क्या लगदा ?'

4. **जीजा**: 'सालिये'! ऐ मेरी माऊ दा यार मेरा पियो लगदा ।'

'लैह् रे-लंह् रे मुंगरे पठाणकोटों आये न !
जीजा पुच्छै बोबो ते, परौणे कुत् ते आये न।''
'चुप कर बसरा बें ऐ तेरे पियो आये न ।
तेत्ते डरदिया, सुत्थणी हेठ लुकाये न,
हल्ला न कर मोइया, परौणा बुलायें दा ऐं ।
इक्की दुई दा बी नी चौटां (चौसठ) दा तू जाया ऐ ।''

5. **जीजा**: कैं ता लौंग लैचियां दे कैं तां ताइयां चाचियां दे ।
कैं तां लौंग सपारी दे, कैं तां भैंण कुआरी दे ।'

6. 'हरिये मूलिए नी तेरे लैह् रे लैह् रे पत्त ।
जीजे दा पियो जोरो दिपैं कन्ने जोड़ैं हत्थ ।
इसा जो लेई जान्नयो जी, दिल गिआ है अक्क ।

7. मकोड़िया वे तेरी जात बुरी, खसम खाणियां वे तेरी जात बुरी ।
जीजे दिआ अम्मा सिआई सुत्थण, मकोड़ै कीती सुक्खण मकोड़िया . . . . .

8. आजा वे जीजा साड़े कारखाने, तिज्जो लोए दा कम्म सिखा देइये ।
तेरी माई दी रेल गड्डी, तेरे बाओ दा इंज्जण बणा देईये ।
तैंनू सिमले-दिल्लिया, बम्बई दी सैल करा देइये ।।

6. **सिर गुन्दी की गालियां**.—लोआं लेने (लग्न) के बाद जब दूल्हे राजा को सालियों तथा औरतों की भीड़ के बीच बैठ कर लोकाचार करने पड़ते हैं तो उसे सालियां जरूरत से ज्यादा तंग करती हैं । विदा से थोड़ी देर पहले की सिर गुन्दी में तो बेचारे की जी भर कर रैगिंग की जाती है । छन्द पाने की विनय को जब वह मौन में पी जाता है तब उसे स्वयं छंद कह कर बतलाती हुई गातीं हैं :—

छन्द पैंयां जीजा सालियां मैं ।
छन्द परागे आइये जाइये, छन्दे अग्गैं तोता ।
जीजे दिआ माऊ खसम कीता साड़े पिंड़ दा खोता ।
छन्द पैंयां जीजा सालियां मैं— ।
छन्द परागे आइये जाइये, छन्दे अग्गैं कूड़ा ।
जीजे दिआ भैंणा खसम कीता साड़े पिंड दा चूड़ा ।।
छन्द पैंयां जीजा सालियां मैं ।

और वे तब तक ऐसी ही कटूक्तियां सुनाती हैं जब तक जीजा जी के श्रीमुख से किसी छन्द के रूप में अमृत रूपी शब्दों को सुन कर अपने कानों को तृप्त नहीं कर लेतीं ।

7. **भड़ग्गे की गालियां**.—दुल्हिन को विवाह कर जब ले जाते हैं तो अन्तिम धाम में उसे अपने गोत्र में मिलाया जाता है । इस अवसर पर सास, बहू के मुंह में तथा बहू सास

हिमाचल की हेला या बुआरा प्रथा

—रवीन्द्र रणदेव

एक युग था जब हिमाचल के गांवों में सारा काम काज एक इकाई के अधीन होता था। गांव का हर व्यक्ति एक दूसरे से जुड़ा रहता था। उन सब में आपसी सहयोग की भावना होती थी। यहां तक कि कोई अपाहिज, बूढ़ा बिना कमाई के नहीं रह पाता था। यह ठीक है कि अपाहिज होने के नाते कोई व्यक्ति अपनी खेती-बाड़ी का काम नहीं कर सकता, किन्तु यदि उस गांव का सहयोग हो, तो उस का कोई काम रुक नहीं सकता था।

हिमाचल के पहाड़ी गांवों में सहयोग ऐसी शक्ति है जिस के द्वारा यहां के निवासी बड़ी समस्या हल कर लेते हैं और बड़ी से बड़ी कठिनाई पार कर लेते हैं।

गांव का नियम था कि किसी भी बड़े काम में, चाहे वह किसी भी जाति वर्ग या दर्जे के लोगों का हो, गांव के हर घर से एक व्यक्ति उस काम में सहयोग जरूर देगा। इस कार्य को वहां के लोग 'हेला' या बुआरा प्रथा कहते हैं।

ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने में हेला' या 'बुआरा' प्रथा का बहुत भारी सहयोग है। पहाड़ी गांव में हर काम के लिए बहुत अधिक श्रम की आवश्यकता होती है। बहुत से कार्य ऐसे है जिन में एक आदमी से कुछ काम नहीं हो पाता। जैसे, धान रोपना, खेतों में खाद फैंकना, शादी-विवाह का प्रबन्ध करना, खेतों में मेंड़ बनाना, आदि। इन कामों में कम-से-कम समय तथा ज्यादा-से-ज्यादा श्रम की आवश्यकता होती है।

वर्ष में दो बार खेती-बाड़ी के समय पर ऐसे बहुत से अवसर आते हैं जब कि गांव के हर घर को हेला' या 'बुआरा' से अपना काम पूरा कराना पड़ता है। ऐसे समय या अवसरों पर गांव के हर घर में सन्देश भेज कर बुलावा भेजा जाता है कि फलां समय पर अमुक दिन अमुक कार्य के लिए आ जाएं। इस बुलावे के अनुसार हर घर से एक एक व्यक्ति बुलावे वाले घर पर जाता है। ऐसे समय पर बुलावा भेजने वाला घर उन लोगों को खाना दोपहरी तथा शाम का भोजन देता है।

इसी प्रकार जितने दिन का यह काम होगा, सब मिल कर करेंगे। यह कार्यक्रम हर एक घर के साथ चलेगा। इस से सारे गांव का काम भी समय पर होगा और किसी व्यक्ति को यह अनुभव भी नहीं होगा कि 'मैं' पीछे रह गया हूं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि लोक-समाज में मनोरंजन के लिए विशेष उत्सवों पर ही गालियों का प्रयोग होता है। ऐसी गालियों को गाकर ऐसे वातावरण की निबन्धना कदापि नहीं की जाती जिससे वैमनस्य उत्पन्न होता हो। ये गालियां तो ऐसा महाकाव्य है जिसका अंगीरस हास्य है। इन गालियों में लोक-कवित्रियों ने छन्द-योजन में लय तथा अंत्यानुप्रास का विशेष ध्यान रखा है। वर्ण-संगति, वर्ण-मैत्री का जैसा विधान इन गीतों में मिलता है, वैसा यदि नागर-साहित्य में मिलता है तो आश्चर्य नहीं। लोक-कवित्रियों ने यद्यपि न तो काव्य-शास्त्र का अध्ययन किया था और न ही उन्हें इन के नाम का ही परिचय था पर इसे नहीं नकारा जा सकता कि उनकी कृति लक्षणा, व्यंजना, ध्वनि अथवा शब्द एवं अर्थालंकारों के भेद-प्रभेद, नहीं पाये जाते। उनमें काव्य की आत्मा 'रस' अलंकार, 'रीति', 'ध्वनि', अथवा वक्रोक्ति है ही नही। है, सब कुछ है जरा गहरे पानी बैठ कर तो देखिये। हां, इतना जरूर कहा जायेगा कि यदि इन कवित्रियों मानस में कहीं काव्यांग कोई था, तो था, मात्र छंद का तुक। तुकांत गीत रचना अपना सानी नहीं रखती है। विचार एवं कल्पना के जिन पंखों पर आरूढ़ होकर ये गीत स्वरलहरियां विकीर्ण करने के लिए रचे गये हैं उन पर कहीं कहीं तो उस नागर-साहित्य को वारने को जी चाहता है जिससे सूर प्रभृति कवियों का काव्यत्व भरा पड़ा है।

उक्त गाली प्रधान लोक काव्यांशों में व्यंग्योक्तियों तथा हास्योक्तियों के माध्यम से उस स्नेह-सरिता के लिए पथ का निर्माण किया गया है जो हमारे सांस्कृतिक वैभव को सदियों से मौखिक धरातल पर जीवित रखे हुए है। हिमाचल की इस सांस्कृतिक सम्पदा की खोज यदि अन्य जिलों तथा जनपदों के परिप्रेक्ष्य में भी की जाये तो अनुसन्धित्सुओं के लिए शोध के ऐसे मार्ग का सूत्रपात होगा जिससे बहुमुखी जीवन मूल्यों का विनिमय सरलता से हो सकेगा। अस्तु!

—हिन्दी विभाग,
श्रीराम कालेज ऑफ कामर्स,
दिल्ली-7

पहाड़ी चित्र कला में चम्बा कलम

—हरिश्चन्द्र राय

पहाड़ी चित्रकला में चम्बा का अपना विशिष्ट स्थान है। यूं तो वास्तु कला व मूर्ति कला के श्रेष्ठतम उदाहरण चम्बा व उसके आसपास के क्षेत्र में एक सहस्राब्दि पूर्व के भी प्रचुर संख्या में मिलते हैं परन्तु चित्रकला का आरम्भ यहां बहुत देर से हुआ। प्राचीन काल अथवा पूर्व मध्यकाल में भी यहां चित्रकला का प्रचलन था उसका कोई ठोस उदाहरण हमारे सामने नहीं है।

अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में चम्बा में राजा राज सिंह का राज्य था। इस से पहले चम्बा की चित्रकला के विषय में हमारा अर्जित ज्ञान अभी बहुत कम है। बशोली कलम, जिसका पर्याप्त विकास सत्तरहवीं शताब्दी के अन्त तक वहां के शासक राजा राजा कृपालपाल के संरक्षण में हो चुका था, चम्बा में भी अट्ठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में प्रविष्ट हो चुकी थी। इसका प्रमाण राजा उगर सिंह की एक प्राप्त शबीह से मिलता है, इस राजा का सन् 1720 से 1735 तक चम्बा पर शासन रहा। उगर सिंह के पश्चात् दलेल सिंह और उसके बाद उमेद सिंह को राजसिंहासन का अधिकार मिला। अनुमानतः कहा जा सकता है कि इन राजाओं के शासन में चित्रकला पनपती रही होगी। किन्तु, राजा राज सिंह के शासन में तो हमें चित्रकला की अनेक प्रवृत्तियों के ज्वलन्त प्रमाण देखने को मिलते हैं। सन् 1974 में अपने राज्याभिषेक के समय राज सिंह की आयु केवल नौ वर्ष की थी। तीस वर्षों के दीर्घ शासन के पश्चात् वह एक युद्ध में लड़ते लड़ते वीर-गति को प्राप्त हुआ था। यद्यपि उसका अधिकांश जीवन युद्धों में ही बीता तथापि उसने अपने दरबार में अनेक कलाकारों को आश्रय दे रखा था, जिनमें चित्रकारों की संख्या पर्याप्त थी।

लगभग सन् 1770 के आसपास चित्रित हुए राजा राज सिंह की युवावस्था के एक चित्र से, जो कि एन० सी० मेहता के संग्रह में हैं, चम्बा कलम की आरम्भिक अवस्था पर बहुत कुछ प्रकाश पड़ता है। इस चित्र में राजा को एक संगीत-सभा के मध्य दिखाया गया है। उसमें दिखाई गई नृत्यांगना की मुखाकृति कांगड़ा कलम की स्त्री मुखाकृतियों के ठीक अनुरूप है, जो कांगड़ा में राजा घमण्ड चन्द के शासन काल में लगभग 1765 और 1770 के मध्य पर्याप्त विकसित हो चुकी थी। गुलेर व चम्बा दोनों ही स्थानों की समसामयिक चित्रकला में यह प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इसका कारण यह हो सकता है कि गुलेर ने तो राजा घमण्ड चन्द का बहुत कुछ आधिपत्य स्वीकार कर लिया था और चम्बा भी उसके शक्तिशाली प्रभाव से अछूता नहीं बच सकता था, किन्तु इस चित्र में नृत्यांगना के अतिरिक्त जो अन्य मुखाकृतियां दिखाई गई हैं उनमें कांगड़ा पूर्व शैली का

वैसे तो अब भी 'हेला' या 'बुआरा' प्रथा हिमाचल में कहीं-कहीं प्रचलित है किन्तु इस प्रथा का लोप होना हमें आहिस्ता-आहिस्ता दिखाई दे रहा है।

प्रदेश में आधुनिकता की रोशनी का प्रसार होने के साथ साथ नई पीढ़ी में सहयोग की भावना का न होना इस का मुख्य कारण है, क्योंकि इस प्रथा का नियम यह रहा है कि जिस घर से कोई व्यक्ति हेले में नहीं आएगा उस घर में हेले का बुलावा आने पर भी कोई व्यक्ति वहां नहीं जाएगा।

जैसे जैसे लोगों ने 'हेले' या 'बुआरे' पर जाना छोड़ दिया वैसे वैसे इस प्रथा का लोप होता चला गया।

आज के युग में सहकारी कृषि को काफी प्राथमिकता दी जाती है। इस का प्रचार-प्रसार किया जाता है। इसे गांव की अर्थव्यवस्था को सुधारने के लिए मूल मंत्र माना जा रहा है किन्तु आपसी सहयोग की भावना न होने के कारण इस का परिणाम भी वही होने का डर है जो 'हेले' या 'बुआरा' प्रथा का होता जा रहा है। आज के कृषि वैज्ञानिक मानने लग गए हैं कि सहकारिता द्वारा उपज बढ़ाई जा सकती है और गांव का आर्थिक स्तर भी ऊंचा उठाया जा सकता है। ऐसी सूरत में यह अधिक अच्छा होगा कि यदि प्रदेश में हेले' या 'बुआरे' की प्रथा को सार्वप्रादेशिक रूप में ले लिया जाए क्योंकि इस प्रथा के साथ यहां के लोगों का सम्बन्ध रहा है और वे इस प्रथा के हर पहलू को समझते हैं। ऐसा करने पर इस लुप्त होती जा रही प्रथा को पुनः जीवन मिल सकता है।

आधुनिक सहकारी कृषि में सब से बड़ी बात जो यहां के लोगों को अखरती है, वह है—कृषि योग्य भूमि का सहकारी नाम की एक संस्था का स्वामित्त्व होना, जब कि 'हेला' या बुआरा' प्रथा में कृषि योग्य भूमि या उस के स्वामित्व में कोई अन्तर नहीं आता। सहकारी कृषि में पहले उपज एक स्थान पर इकट्ठी की जाती है और फिर हिसाब से हर परिवार को बंटती है। लेकिन इस प्रथा में उपज को बांटने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता, वहां तो श्रम का बदला श्रम से दिया जाता है।

हिमाचल सरकार प्राचीन परम्पराओं को पुनर्स्थापित करने के लिए अनेक प्रकार के पग उठा रही है। आए दिन प्रदेश की संस्कृति तथा परम्पराओं को न छोड़ने का स्वस्थ तथा सबल आग्रह किया जाता है, अतः इस बात की आवश्यकता है कि इस प्रथा का पुनरुद्धार किया जाए।

आज के युग में जब राष्ट्रीय नेताओं द्वारा राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था की आधार-शिला ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था मानी जाती है और गांवों के विकास की ओर ज्यादा ध्यान दिया जाता है, ऐसी परिस्थितियों में हिमाचल जैसे पहाड़ी प्रदेश में इस प्रथा का फिर से बोल बाला हो सकता है। वैसे, इस प्रथा का लोप नहीं हुआ है, केवल क्षति ही हुई है।

ग्रामों की अर्थ व्यवस्था तथा विकास में पंचायती-राज संस्थाओं का सीधा हाथ है। यदि पंचायतें अपने अपने अधिकार-क्षेत्र के गांवों में इस प्रथा को पुनः स्थापित करने पर जोर दें तो पहाड़ी ग्रामीण अर्थ व्यवस्था में नई क्रान्ति आ सकती है।

—नाभा, शिमला।

(1) चम्बा कलम की पहली विशेषता तो इन चित्रों में चित्रित मुखाकृतियों में ही देखने को मिलती है । इन में होंठ छोटे और पतले, आंखों में तिरछा घुमाव, चापयुक्त भौंहें, छोटी व गोल ठोडी और सुडौल पैनी नासिका को समन्वित कर के बहुत आकर्षक चेहरों को चित्रित किया गया है । रंगमहल के भित्तिचित्रों में भी इसी प्रकार की मुखाकृतियों के कुछ अधिक गोलाईदार ठोडी के साथ अनेक चित्र पलकों में देखने को मिलते हैं ।

(2) चम्बा कलम की दूसरी विशेषता स्त्रियों व पुरुषों के लम्बे कदों में दिखाई पड़ती है । शरीरों की यह लम्बाई यदा कदा अतिशयोक्ति की सीमा पर भी पहुंच गई है । इनमें शेष शरीर की अपेक्षा चेहरे को अनुपाततः छोटा दिखाया गया है जो कि एक विशिष्ट सौन्दर्य उत्पन्न करता है ।

(3) इस चित्र शैली की तीसरी विशेषता पृष्ठभूमि तथा चित्र परिवेश के अंकन में हैं । समस्त प्राकृतिक दृश्य को कुछ लम्बे लम्बे चापों में विभक्त करके उनके ऊपर नुकीले आकार के सफेद बादल दिखाए गए हैं । इन कतिपय विशेषताओं के आधार पर हम चम्बा के चित्रों को एक ऐसे मुहावरे में चित्रित देखते हैं जिसका मूल उद्गम स्रोत कांगड़ा कलम होते हुए भी वह उससे स्पष्टतः पृथक हो जाता है ।

इन चित्रकारों के नाम गिनाना कठिन है क्योंकि भारतीय चित्र-परम्परा में चित्रों पर नामांकन की प्रथा नहीं थी पिछली शताब्दी क्योंकि हम से बहुत दूर नहीं है अतएव जनश्रुति के आधार पर कुछ नामों का पता चल सका है । ऐसे ही एक मलिक मुहम्मद नामक शिल्पी का नाम सुनने को मिला है जिसकी मृत्यु 1930 में सत्तर वर्ष की आयु में चम्बा में हुई थी । कहा जाता है कि उसका पितामह लाहौर से अस्त व्यस्त होकर बशोली दरबार में आश्रय लेने आया था और बाद में वहां का दरबारी कलाकार बन गया था । बशोली के राजा ने बाद में चम्बा में विवाहिता एक राजकुमारी के विवाह में दहेज के साथ उसे चम्बा भेज दिया था । वह एक कुशल चित्रकार था और रंगमहल के कतिपय भित्तिचित्र उसके नाम से संलग्न बताए जाते हैं । इस जनश्रुति से यह भी पता चलता है कि उस समय दहेज के रूप में भी चित्रकारों को दिया और लिया जाता था । गुलाम मुहम्मद और उसके पिता भी चम्बा के थे और आज भी उसका नाम लकड़ी की नक्काशी के लिए लिया जाता है ।

दुर्गा नामक एक चित्रकार ने भी रंगमहल के कुछ भित्तिचित्र बनाए थे । उसका पौत्र हीरा लाल अब भी जीवित है जो पेशे से तो बढ़ई है परन्तु अपने पूर्वजों की परम्परा को अल्पाधिक अब भी निभाए हुए है । कहा जाता है कि दुर्गा गुलाम मुहम्मद के पितामह का समकालीन था । दुर्गा के पुत्र मंगनू का नाम भी चित्र बनाने के लिए प्रसिद्ध रहा है । दो अन्य चित्रकार जिनकी मृत्यु कुछ वर्षों पहले ही हुई है बिलू मिस्त्री और प्रेम लाल थे । बिलू का तो दुर्गा के साथ कौटुम्बिक सम्बन्ध भी बताया जाता है । प्रेम लाल का पुत्र चित्र अवश्य बनाता है परन्तु वह परम्परा से हट चुका है ।

तारासिंह नामक एक चित्रकार ने अखण्डचण्डी महल के और ओवरी धर्मशाला के भित्ति-चित्र बनाए थे । उन्नीसवीं शताब्दी तक वह कार्यरत रहा। अब भी चम्बा में लोग

स्पष्ट अनुसरण किया गया दिखाई पड़ता है। गुलेर के राजा गोवर्द्धन चन्द और जम्मू के राजा बलवन्त सिंह के दरबारों में भी उस समय यही चित्र शैली प्रचलित थी परन्तु राजसिंह के इस चित्र की विशेषता यह है कि शेष समस्त परिवेश कांगड़ा-पूर्व शैली में है और नृत्यांगना की मुखाकृति, कांगड़ा कलम से प्रभावित है।

राजा राजसिंह की आयु उस समय बहुत कम थी अतः यह अनुमान किया जा सकता है कि इस चित्र का रचयिता चम्बा के दरबार में उसके पहले से ही रहता होगा। इस चित्र की शैली से यह भी स्पष्टतया व्यक्त होता है कि वह कलाकार मुगल शासक मुहम्मद शाह के समय में प्रचलित चित्र शैली का अनुयायी था और संम्भवतः एक विस्थापित व्यक्ति के रूप में चम्बा दरबार में आश्रय पाने के लिये आया था। इसी प्रकार अन्य अनेक कुशल चित्रकार भी मैंदानों से भाग कर इन पहाड़ी राज्यों में आश्रय ग्रहण करने आए थे।

इस चित्र के अतिरिक्त राजसिंह के और भी अनेक चित्र प्राप्त हैं जिनमें कांगड़ा कलम का प्रभाव स्पष्टतः दिखाई पड़ता है। प्रसिद्ध प्रासाद "रंगमहल" का निर्माण भी राज सिंह ने करवाया था, यद्यपि उसकी नींव उमेदसिंह के समय में ही पड़ चुकी थी। रंगमहल अपने सुन्दर भित्तिचित्रों के लिए विख्यात है, जिनमें से अनेक तो राजसिंह के शासनकाल में ही बन चुके थे। कुछ विद्वानों का विचार है कि रंगमहल का निर्माण उमेदसिंह के सामने ही पूरा हो चुका था लेकिन, यह तो मानना ही होगा कि चम्बा की कला में मुगल प्रभाव का आरम्भ उमेदसिंह के समय से ही आरम्भ हो गया था, जब कि कितने ही विस्थापित कलाकार, कारीगर व साहित्यिक विद्वान मुगल साम्राज्य की नींव हिलने के साथ ही मैंदानों से भाग कर पहाड़ों में शरण ले रहे थे। फिर भी निश्चय-पूर्वक यह नहीं कहा जा सकता कि कौन कौन से भित्तिचित्र उमेदसिंह के समय में निर्मित हुए।

राजसिंह के पश्चात् जीतसिंह गद्दी पर बैठा। चम्बा के भूरीसिंह संग्रहालय में उस का एक चित्र अपनी रानी के साथ है। चम्बा के चित्रों की यह विशेषता रही है कि उनमें राजा को रानी या युवराज के साथ दिखाया जाता था। कांगड़ा के राजा संसार चन्द ने भी अपने इसी प्रकार के चित्र बनवाए थे। जीत सिंह के बाद चरतसिंह राज्य का उत्तराधिकारी हुआ। इसका भी एक चित्र चम्बा संग्रहालय में है। इसमें राजा को उद्यान के मध्य अपनी रानी के साथ दिखाया गया है। चित्र के परिवेश में गायिकाओं और बांदियों को भी सम्मिलित किया गया है।

यद्यपि चम्बा चित्रकला में सामान्यतः कांगड़ा कलम की रूपरेखा व शिल्प विधान का अनुसरण किया गया है तथापि ऐसे भी कई चित्र उपलब्ध हैं जिनमें कतिपय स्थानीय मुहावरों को प्रश्रय मिला है। चम्बा की इस स्थानीय शैली में बने चित्रों की संख्या अल्प होने के कारण यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह शैली थोड़े ही चित्रकारों तक सीमित रही होगी। इस शैली की अपनी कुछ निजी विशेषताएं हैं जो उन्हें स्पष्टतः अन्य स्थानों में बने हुए पहाड़ी चित्रों से पृथक करती हैं। इन विशेषताओं में भी तीन सर्वप्रमुख हैं:—

बिलासपुरी लोकगीतों में वेदना

—पद्मनाभ गौतम

यद्यपि लोकगीतों की कोई राजनैतिक सीमा नहीं होती तो भी किसी विशेष स्थान या इलाके में कुछ लोक-गीतों को अवश्य गाया जाता है जिन्हें किसी अन्य स्थान अथवा इलाके में नहीं गाया जाता। अतः क्षेत्र-विशेष में ही गाये जाने वाले लोकगीतों को उस क्षेत्र के लोक-गीतों की संज्ञा दी जा सकती है।

वस्तुतः वेदना ही काव्य की जननी रही है। कूर्मांचल के प्राकृतिक वातावरण से प्रेरणा प्राप्त करने वाले कवि सुमित्रानन्दन पन्त ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है—

वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान।
निकल कर आंखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान॥

जब ऋषि वाल्मीकि ने काम मोहित क्रौंच पक्षियों में से एक को किसी शिकारी द्वारा मारते हुए देखा तो उन का शोक मानवता के प्रथम पद्य के रूप में फूट पड़ा था—

मा निषाद प्रतिष्ठाम् त्वम् अगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौंचमिथुनादेकम् अवधीः काम मोहितम्॥

अर्थात्—हे निषाद! तुम वर्षों तक प्रतिष्ठा को प्राप्त न करो क्योंकि तुम ने मैथुनरत काम-मोहित क्रौंच-युगल में से एक को मार दिया है। आदि कवि के इस महान् विषाद की तरह बिलासपुर के लोकगीत "निमाणेया हंसा" में भी एक बिछोह की टीस भरी पड़ी है—

निमाणेया हंसा तैं केहड़ी वेला लैया बनवास!
होर तां पंछी हंसा डाली पर बैठदे,
तेरी डाली झुरदी निमाणी ····ओ निमाणेयां हंसा—
होर तां पंछी हंसा चुग जे खांदे,
तेरी चुग रुलदी निमाणी ····ओ निमाणेया हंसा—
होर तां पंछी हंसा अपने बच्चेयां जो खिलांदे,
तेरे बचड़े रुलदे निमाणे ····ओ निमाणेया हंसा—
होर तां पंछी हंसा हटी घरे आऊंदे,
तेरी बाट झूलदी निमाणी ····ओ निमाणेया हंसा—

उस को एक कुशल चित्रकार व तांत्रिक के रूप में याद करते हैं। उसके एक शिष्य ध्यान सिंह का नाम भी उल्लेखनीय है। सोनू और जवाहर नाम के दो भाई भी इस शताब्दी के प्रारम्भ में चित्रकारी का काम करते रहे। ऐसा बताया जाता है कि दुर्गा के साथ गुलेर के धनी राम नामक चित्रकार ने भी कुछ दिनों काम किया था।

बीसवीं शताब्दी में चम्बा कलम का कुछ श्रेष्ठ काम देखने को नहीं मिलता। कला सामाजिक परिस्थितियों की उपज होती है और यातायात के साधनों की सुलभता के साथ साथ चम्बा का वह एकाकीपन भी भंग हो चुका है जिसके कारण यहां शेष देश के उत्थान पतन से उदासीन रहते हुए भी यहां की कला साधना अक्षुण्ण गति से चलती रही थी। वहां सम्प्रति मैदानों की कला-रुचि प्रविष्ट हो चुकी है और चम्बा निवासियों की आस्था अपने स्थानीय सौन्दर्य-मूल्यों से हटती जा रही है। प्रेम लाल के निधन के साथ साथ चम्बा के जन-जीवन में बंग-द्वारी अथवा चम्बा रूमालों के रूपांकों को उपयोग में लाने की जो क्षीण धारा चली आ रही थी, वह भी समाप्त हो गई।

–प्रिंसिपल, आर्टस कालेज,
शिमला।

बेचारा सीधा-सादा पति इस पर कहता है "मां मैंने उसे दो आवाजे लगाई पर साजन बेटी नहीं उठी ।"

तिजो तां मायें मेरे कुछ नी बलौन्दा,
तैं मेरी जोड़ी बगाड़ी ।

एक अन्य गीत में लड़की बेचैन हो कर अपनी निस्सहाय अवस्था को कोसने लगती है– "हे पैसे के लोभी मेरे पिता! तूने मेरे साथ अन्याय किया है। अपनी अन्य लड़कियों की तो तूने समीप ही शादी की है। मेरी क्यों बीहड़ पहाड़ में शादी की? तेरी अन्य लड़कियां तो लाल दुपट्टे ओढ़ती हैं किन्तु मुझे सास जी के उतारे हुए कपड़े पहनने पर विवश होना पड़ता है। तुम्हारी और लड़कियां तो घी में चूरे हुए पकवान खाती हैं किन्तु मुझे बाथू का साग खाना पड़ता है।"

इक दिल बोलदा ओ नदिया डूबी मरना,
दूजा दिल बोलदा ओ विष खाई मरना,
तीजा दिल बोलदा ओ बालक बरेस वे ।
इक बक्ख खादा जले दीया मछिआ,
दूजा बक्ख सपड़ी दे हेठ वे ।
अम्मा मेरी रोवंदी ओ बापू मेरा झूरदा,
वीर मेरा टोलदा ओ नदिआ दे फेर वे ।

अपने इस निस्सहाय, मार्मिक एवम् कष्टपूर्ण जीवन के बारे में सोचते-सोचते वह आत्म-हत्या के बारे में सोचने लग पड़ती है। उसका एक मन करता है कि नदी में डूब जाए। दूसरा मन करता है कि जहर खा कर ही मर जाए। किन्तु उसे आत्महत्या का साहस नहीं होता। अपनी अल्प आयु को देख कर वह मरना भी तो नहीं चाहती। वह सोचती है कि यदि वह डूब कर मर गई तो उसके शरीर का एक भाग जल की मछलियां खा जायेंगी और दूसरा भाग चट्टान के नीचे सड़ जायेगा। जब मायके में इस बात का पता लगेगा तो उसकी मां रोएगी, बाप उससे मिलने को तड़पेगा और भाई नदी के मोड़ों पर घूम घूम कर उसकी लाश को ढूंडेगा।

नारी-वेदना को चित्रित कर के रोंगटे खड़े कर देने वाला यह गीत सम्भवतः विश्व साहित्य में अपना सानी नहीं मानता।

'साजन बेटी' एक बहुत वेदनापूर्ण गाथा है। शादी के बाद दूल्हा कमाने के लिए घर से बाहर चला जाता है। बारह वर्ष बाद (जैसा कि अन्य लोक कथाओं में प्रचलित है) वह अपने घर लौटता है। लौटने पर कुशल क्षेम के बाद अपनी पत्नी के बारे में पूछता है—

बारहें तां बरसे माये कन्त घरे आया,
किती गइओ साजन बेटी?

मां, साजन बेटी अर्थात् समधी की पुत्री, दूसरे शब्दों में उसकी पत्नी कहां है?

गाइयां रीयां गवाणी जित्थी गोआ जे पत्थदे,
उत्थी गइओ साजन बेटी।
सारी तां गवाणी माये मैं टोली आया,
नहीं मिलिओ साजन बेटी।

इस गीत में एक हंस की मृत्यु पर दुख प्रकट करते हुए कहा जा रहा है कि-हे हंस न जाने वह कौन सी अशुभ वेला थी जब तुमने अपने परिवार से सदा सदा के लिए मुंह मोड़ लिया था । अन्य पक्षी अपनी डालियों पर बैठते हैं, अपनी चुग खाते हैं, अपने बच्चों को खिलाते हैं किन्तु तुम्हारी डाली, तुम्हारी चुग तथा तुम्हारे बच्चे असहाय हो कर तरस रहे हैं । अन्य पक्षी वापिस अपने घरों को आते हैं किन्तु तुम्हारा रास्ता निस्सहाय हो कर तड़पता रहता है ।

ऊपरलिखित लोकगीत में एक हंस के माध्यम से मानव-वेदना को प्रकट किया गया है । पुरुषों की अपेक्षा सम्भवत: स्त्रियों को अधिक वेदना मिली है । मानवता का इतिहास इस बात का साक्षी है कि सामाजिक कुरीतियों, बन्धनों एवम् भेदभावों का जितना शिकार नारी को होना पड़ा है उतना पुरुष को नहीं । लड़कियों का उनकी इच्छा के बिना किसी भी स्थान पर अपने पिता के घर से दूर अथवा समीप विवाह करवा देना हिमाचल के अन्य इलाकों की तरह बिलासपुर में भी एक बात थी । दुर्भाग्य से यदि लड़की की कहीं दूर तथा अवांछित घर में शादी कर दी जाती, तो उसे सारी उमर अपनी वेदना को निस्सहाय होकर दासों की तरह अपने हृदय में दबा कर जीना पड़ता था ।

ठीक ऐसी ही व्यथा से–

नीक्की नीक्की कुमली नामक लोक गीत
प्रस्फुटित हुआ है ।

नीक्की नीक्की कूमली ओ बागी बागी झरदी,
तन्द बी न टुटदी पूणी बी न मूकदी,
सस्सु जी बी नी बोलदी ओ पाणियो जो जाणा ।
तथा जित्थी जे बच्चा कुड़ियां गुड्डिया खंल्यान्दियां,
उत्थी गइओ साजन बेटी ।
जित्थी जे माये कुड़ियां गुड्डियां खल्यान्दियां,
उत्थी टोली ओ साजन बेटी ।

"तो बेटा, जहां लड़कियां गुड्डियां खेलती हैं वहां साजन बेटी गई होगी", माता कहती है इस पर बेटा कहता है, "जहां लड़कियां गुड्डियां खेलती हैं मैं वहां भी ढूंड आया किंतु साजन बेटी मुझे वहां भी नहीं मिली ।"

जित्थी जे बच्चा सेलड़ियां पाणिये नूं जांदियां,
उत्थी गइओ साजन बेटी ।
सारे खुए त पण्यान्दे मैं टोली आया,
नजरी नी आई साजन बेटी ।

मां और बहाना लगाती है, "जहाँ उसकी सहेलियां पानी लेने जाती हैं वहां वह भी पानी लेने गई होगी ।" बेटा कहता है "मां ! मैं सभी कूओं तथा पानी लाने के स्थानों पर ढूंढ आया, पर कहीं भी मुझे साजन बेटी दिखाई नहीं दी ।"

उच्ची तां माड़ी बच्चा पलंग ढलाया,
उत्थी सुत्ती ओ साजन बेटी ।
इक हक भी मारी दूजी भी मारी,
सुत्ती न जागीओ साजन बेटी ।

सन्देश ले जाने वाले कौए के उपकार का प्रतिकार तो होना ही चाहिये। यही सोचती हुई यह युवती कहती है—इस उपकार के बदले मैं किस के साथ तेरी काली चोंच और पंखों को मढ़ाऊं ? वह स्वयम् ही उत्तर देती है—सोने के साथ तेरी काली चोंच और चांदी के साथ तेरे काले पंखों को मढ़ा दूंगी। तुम कृपया मेरा सन्देश अवश्य ले जाओ।

हां जी, मरुये दीयां छांवां गोरी बाचण बैठी
नैण भरी भरी- रोवे।
हां जी, चुप करो चुप करो खूनिआं नैणो,
पल भर बाचण देवो।

युवती पत्र लिखने के अनन्तर मरु वृक्ष की छाया में बैठ कर पढ़ने लगती है। पढ़ते समय आंखों से बार बार अश्रु-धारा फूटती है। अपने खून के आंसू बहाने वाली आखों से कहती है, "तुम थोड़ी देर के लिये आंसू बहाना रोक दो। मुझे पल भर पढ़ तो लेने दो।"

कौए के द्वारा संदेश भेजने की कल्पना निस्सहाय अवस्था तथा मानसिक उद्विग्नता को बहुत ही सरल ढंग से प्रकट करती है।

बिलासपुर के लोक गीतों में "मोहणा" का अपना ही स्थान है। इस गीत को गाते गाते अब भी लोग प्रायः रो जाते हैं। घटना इस प्रकार से बताई जाती है—बिलासपुर के राजा विजय चन्द के पास मोहन के भाई नौकर थे। ये लोग मोरसिंगी ग्राम के रहने वाले थे। किसी कारण अपने गांव में झगड़ा हो जाने पर मोहन के भाइयों ने अपने एक पड़ौसी की हत्या कर दी। भाइयों ने सीधे सादे मोहन को कहा "तुम यह मान जाओ कि तुमने ही यह खून किया है। हम तुम्हें राजा से प्रार्थना करके छुड़वा देंगे। किन्तु यदि हम कहते हैं कि हमने खून किया तो फिर हमें छुड़वाने वाला कोई नहीं होगा।" भोला-भाला मोहन भाइयों की बात में आ गया। खून का स्वीकार करना ही था कि कानून ने उसे अपनी लपेट में जकड़ लिया। मोहन को फांसी हुई। लोग एक निरपराध को फांसी पर लटकते हुए देख कर फूट पड़े—

आया मरना ओ मोहणा आया मरना,
तेरे भाइयां रीया कितिआ आया मरना।

हे मोहन ! तुझे अब तेरे भाइयों की करनी के कारण मरना पड़ रहा है।

रोया करदी ओ मोहणा रोया करदी,
तेरी बालक बलेसरु रोया करदी।

मोहन ! तेरी अल्पायु पत्नी, बलेसरु, तेरे-फांसी पर लटकने के दुःख से दुखित हो कर रो रही है।

मां उत्तर देती है 'बेटा ! जहां गौशाला में उपले पाथे जाते हैं वहां तुम्हारी पत्नी गई है'' । बेटा कहता है—मां मैं सारी गौशाला मैं ढूंढ आया हूं किन्तु मुझे साजन बेटी नहीं मिली ।

किन्तु अब तक वह अपनी मां की दुष्टता का अनुमान लगा लेता है और रो कर कहने लगता है, "मां मुझ से तुझे कुछ भी नहीं कहा जाता । तैंने मेरी पत्नी को मार कर मेरी जोड़ी बिगाड़ दी ।"

यह गीत बहुत पुरानी आर्थिक व्यवस्था की ओर संकेत करके सास बहू के सम्बन्धों की एक दुःखद लड़ी को उद्घाटित करता है ।

"कालेया कागा" नामक गीत में भी एक दूर विवाहित युवती की करुण गाथा है । युवती अपने मां-बाप से मिलना चाहती है । सम्भवतः मिलन सम्भव नहीं है तभी वह पत्र लिखने की सोचती है। नियमित डाक तार व्यवस्था न होने के कारण काले कऊये द्वारा अपने संदेश भेजने की कल्पना करती है :-

उडी जायां, उडी जायां कालेया कागा,
उडी के सनेहा लेई जायां ।

हे काले कऊऐ ! तू उड़ जा और उड़ कर मेरे मां बाप को मेरा संदेशा ले जा ।

हांजी किसे नूं भी देणा मेरे सुख दा सनेहा
किसे नूं भी देणियां चिट्ठियां ।
हांजी अम्मां नूं देणा मेरे सुख दा सनेहा,
बापू नूं देणियां चिट्ठियां ।

युवती मन ही मन कल्पना करती है कि मुझे किसे अपने सुख का सन्देश देना चाहिये और किसे अपना पत्र भेजना चाहिये । अपने आप ही उत्तर देती है कि उसे अपनी मां को सुख का सन्देश भेजना चाहिये और अपने पिता को पत्र भेजना चाहिये ।

हांजी काहे दे लड़ बन्नू, सुख दा सनेहा,
काहे दे लड़ बन्नू चिट्ठियां ।
हांजी पटके दे लड़ बन्नू सुख दा सनेहा
साफे दे लड़ बन्नू चिट्ठियां ।

कल्पना में डूबी हुई युवती सोचती है कि उसे किस वस्त्र के किनारे के साथ बांध कर सुख का संदेश भेजना चाहिये और किस वस्त्र के किनारे के साथ बांध कर चिट्ठियां भेजनी चाहिये ? अपने प्रश्न का स्वयम् ही उत्तर देती है। उसे पटके (उत्तरीय) के किनारे से बांध कर सुख का संदेश भेजना चाहिये और पगड़ी के कोने से बांध कर चिट्ठियां भेजनी चाहियें ।

हां जी काहे मढ़ाऊं तेरियां कालियां चूंजां
काहे मढ़ाऊं कालेया फंगा ?
हांजी सिउने मढ़ाऊं तेरियां कालियां चूंजा
रूपे मढ़ाऊं कालेया फंगां ।

कर दिया । बहुत से राजाओं के राज्य हड़प कर लिये । बहुत से स्थान जीत लिये । उन्होने निस्सन्देह कई सुधार भी किये जिन्हें कि उस समय के लोगों ने पसन्द नहीं किया । बल्कि अपने पारम्परिक जीवन में हस्तक्षेप समझा । यह गीत उसी व्यथा को प्रदर्शित करता है—

इस वे फरंगुये कहर कमाया,
शिमले दी सड़क सपाटूये मलाई ।
देश दोहाइयां दे रहे लोको,
डाड्डा राज फरंगुये दा ।

इन फिरंगियों ने बहुत मुसीबत डाल दी । शिमला की सड़क को सपाटू से मिला दिया । इस से अब हमारी शान्ति भंग हो जायेगी । तभी सारे देश के लोग ऊंचे स्वर से सहायता के लिए पुकारते हुए कह रहे हैं कि इन फिरंगियों का राज्य बहुत ही सख्त है ।

इस वे फंरगुये कैहर कमाया
महलां दी इट चबारे नू लाई,
देश दोहाइयां ।

इन फिरंगियों ने बहुत मुसीबत डाल दी है । राजाओं के महलों को गिरा कर उनके महलों की ईंटों को अपने चबारों में लगा दिया । तभी लोग—

इसा वो सस्सु कैहर कमाया
खाणे रीया वेला नूं चरखा ढलाया
देश दोहाइयां ।

यह गीत यद्यपि तत्कालीन राजनैतिक दुःख को प्रकट करता है फिर भी सास बहू तथा सौतों के पारस्परिक तनाव एवम् कलह जो कि प्रति दिन की क्रिया के अभिन्न अंग थे, वे भी इस में प्रकट हुए बिना न रह सके । इस सास ने बहुत ही मुसीबत डाल दी है, जो खाना खाने के समय चरखा बिछा दिया है । भूख के समय भला कौन चरखा काते !

इसा वो सौकणी कैहर कमाया
सौणे रीया वेला नूं गो धूम मचाया
देश दोहाइयां ।

इस सौत ने बहुत मुश्किल डाल दी है जो सोने के समय लड़ाई झगड़ा डाल दिया है।

इस गीत में जहां राजनैतिक वातावरण से उत्पन्न कठिनाई को प्रकट किया गया है । वहां सास-बहू तथा सौतों के पारस्परिक तनावों को भी अछूता नहीं छोड़ा है ।

खाई ल फुल कु ग्रो-मोहणा खाई लै फुलकु,
अपणी अम्मा रेग्रां हत्थां रा खाई लै फुलकु ।
मैंनी खाणा ओ लोको मैंनी खाणा,
मेरी घड़ी पल मरने री मैंनी खाणा ।

लोग कहते हैं "मोहन ! अपनी मां के हाथों से पकाये हुये फुलके खा लो ।" मोहन इस पर उत्तर देता है, "हे लोगो, मुझे मरने को अब थोड़ा समय शेष रह गया है । अतः मैं इन फुलकों को नहीं खाऊंगा ।"

किनी रैहणा वो मोहणा, किनी रैहणा ?
तेरे रंगलुयें बंगलुये किनी रैहणा ?
भाईयें रैहणा वो लोको, भाईयें रैहणा,
मेरे रगंलुयें बगलुयें भाइयें रैहणा ।

लोग प्रश्न करते हैं "मोहन तेरे रंगीन मकानों में कौन रहेगा ?" मोहन उत्तर देता है "मेरे मरने के बाद मेरे भाई मेरे रंगीन मकानों में रहेंगे ।"

गड्डे थम्बड़े मोहणा, गड्डे थम्बड़े,
बेड़िया रे रेतड़ा च गड्डे थम्बड़े ।
चढ़ी जा तख्ते ग्रो मोहणा ! चढ़ी जा तख्ते,
दम दम दित्तिया चढ़ी जा तख्ते ।

मोहन बेड़ी घाट के रेत में फांसी के लिए खम्बे गाड़ दिये गए हैं । तुम दुःखी न हो और शीघ्र ही इन तख्तों पर चढ़ जाओ ।

बारा बजी गए ग्रो मोहणा! बारा बजी गए,
इस राजे रीया घड़िया बारा बजी गए ।

मोहन ! राजा की घड़ी ने बारह बजा दिये । बारह बजे ही कि मोहन को फांसी के तख्ते पर टांग दिया गया । लोग एक निरपराध को फांसी के तख्ते पर लटकते देख कर शोक से भारी मन से अपने अपने घरों को वापिस लौट आये ।

मोहन द्वारा फांसी को चूमना अपने भाइयों के लिए एक बड़ा बलिदान है । सम्भवतः इतना महान बलिदान विश्व-इतिहास में वहीं मिलेगा । लक्ष्मण एवम भरत द्वारा किये गए बलिदान भी इस महान् बलिदान के समक्ष फीके पड़ जाते हैं ।

'फरंगु' बिलासपुर के गीतों में एक बहुत पुराना मार्मिक गीत है । 'फरंगु' शब्द हिन्दी के 'फिरंगी' से लिया हुआ है । फिरंगी शब्द फिरे हुए अथवा बदले हुए रंग का अर्थात् अंग्रेजों के लिए प्रयुक्त किया जाता है । अंग्रेजों ने पहाड़ों की प्राचीन शान्ति को भंग

पुराने शहर के डूबने की इस वेदना के सम्बन्ध में बहुत से लोकगीत लिखे गए हैं। किन्तु उन में से निम्न लोकगीत, जो सब से अधिक मार्मिक है, यहां प्रस्तुत करना सम्भवतः उपयुक्त होगा।

डूबी गये घरबार आई गया पाणी,
चल मेरी जिन्दें नवीं दुनियां बसाणी ।
महारे बजुर्गारी रखियां नसाणियां,
महारे ही साम्हणे बणियां कहाणियां,
बणियां कहाणियां ....

ग्वाड़ू सवाड़ू मुके, मुकेया खूहा रा पाणी,
भाखड़े रा डैम चड़ेआं, आई गया पाणी,
चल मेरी जिन्दे, नवीं दुनियां बसाणी ।

हमारे घर बार गोबिन्द सागर का पानी आने पर डूब गए हैं। हे प्रिय ! चलो अब नई दुनियां बसायें। हमारे पूर्वजों की सारी निशानियां हमारे ही सम्मुख केवल कहानियां बन कर शेष रह गई हैं। हमारे आंगन और आस पास के छोटे छोटे बगीचे (kitchen garden) समाप्त हो गए, कुंएं का शीतल जल भी समाप्त हो गया। भाखड़ा बांध से अब पानी ही पानी आ गया है। हे प्रिय ! चलो अब नई दुनियां (नये शहर) का निर्माण करें।

जिन्हां जिन्हां गलियां च बापुये फराये,
अम्मा री गोदाच सैर करी आये,
सैर करी आये ....

उन्हांरे प्यारा री गल्लां याद किआं औणी,
डूबी गइयां गलियां आई गया पाणी,
चल मेरी जिन्दे नवीं दुनियां बसाणी ।

जिन गलियों में बापू ने हाथ पकड़ कर फिराया था, मां ने गोदी में सैर करवाई थी, उनके प्यार की बातें अब कैसे याद आयेंगी ! पानी के आने से वे सारी गलियां तो अब डूब गई हैं। इसलिए हे प्रिय ! चलो अब नई दुनियां (नये शहर) का निर्माण करें।

सांडू री नलवाड़ी, रंगनाथा रे मेले,
मुकी गए हुण बेड़ी घाटा रे फेरे,
बेड़ी घाटा रे फेरे........!...

ल्हेड़ा रे बागा री लीची कित्ति खाणी,
डूबी गए बाग आई गया पाणी,
चल मेरी जिन्दे नवीं दुनियां बसाणी ।

976

ऊपरलिखित सभी लोक गीत प्राचीन लोक कवि की कलम से हैं किन्तु इस क्षेत्र में आधुनिक बिलासपुर के लोक गीतों का कवि भी पीछे नहीं रहा है। उसने भी अपने जीवन की कसक को बहुत गम्भीरता से अनुभव करके अपने शब्दों में हमारे सन्मुख रखा है। गोबिन्द सागर ने बिलासपुर के (विशेष कर बिलासपुर शहर के) जीवन को बहुत ही प्रभावित किया है। इसने यद्यपि हमें नया जीवन दिया है फिर भी पुराने नगर, घर-बार तथा हंसने खेलने के स्थानों को हड़प करके हमें अनाथ बना दिया है। अपनी पुरानी सम्पदा के खोने के दुःख को व्यक्त करता हुआ आधुनिक लोक गीतों का कवि फूट पड़ा है:—

भूली जायां दिलड़ुआ हो, टूटी रेया फुलड़ुआ हो
हो मेरे दिलड़ुआ हो.....................
घर से पुराणे जित्थी हस्सेया रोया तू,
हस्सी रोई कने जित्थी बड़ा होया तूं,
भूली जायां दिलड़ुआ हो, मेरे दिलड़ुआ हो......

हे मेरे टूटे हुए फूल के समान दिल उन पुराने घरों को जहां तुम हंसे थे, रोये थे और हंस रो कर बड़े हुए थे अब भूल जाओ।

गलियां च पाणी जित्थी खेलां पाइयां तें,
बड़ते पुराणी जित्थी पींगां पाइयां तैं,
भूली जाइयां ....

जिन गलियों में तुम खेला करते थे अब वहां पानी आ गया है। जिस वट वृक्ष के नीचे तुमने झूले डाले थे, अब वह जलमग्न हो गया है।। हे टूटे हुए दिल, तुम उन सब बातों को भूल जाओ।

सांडू रे मैदाना झीला रा पाणी,
असां से नलवाड़ी हुण कीथी लाणी,
दस्सी देआं दिलड़ुआ हो............

सांडू के मैदान में अब गोबिन्द सागर का पानी आ गया है। हे टूटे हुए दिल ! बताओ वह नलवाड़ी का मेला जो सांडू में हुआ करता था अब उसे कहां लगायें ?

सब कुछ दीता खातिर देशारे,
बदले च पाए करजे उमरां रे,
भूली जाइयां............

हमने अपना सब कुछ देश के खातिर न्योछावर कर दिया और इसके बदले में हमें नये मकान बनाने के लिए उमर भर के लिए ऋणी होना पड़ा है!। हे दिल ! इन सब गमों को भूल जाओ।

हिमाचली में चीश-पाणी

—श्याम कुमारी

पूर्वजों का कथन है—कि सृष्टि के आरम्भ में पानी था। सारी जगती जलमयी थी। सृष्टि के अन्त में भी पानी होगा। सर्वत्र जलमयी होगी। समस्त संसार पानी में डूब जाएगा। प्रायः लोग कहा करते हैं—कि पानी से भय सर्वत्र सर्वदा है परन्तु पानी के बिना जीवन सूना है। पानी का पर्याय जीवन है जैसा कि अमर कोश के प्रथम काण्ड के वारिवर्ग से उद्धरण प्रस्तुत है:—

पयः कीलालम् अमृतं जीवनं भुवनं वनम्।

प्रातः उठते ही वरुण देव का आह्वान किया जाता है। सब क्रिया-कलाप पानी से आरम्भ होता है। स्नान करते समय भारत की पुण्य सलिला नदियों का स्मरण इस प्रकार किया जाता है:—

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ।।

हिमाचल की सब बोलियों में पाणी शब्द का व्यवहार है। महासू और सिरमौर में 'चीश' शब्द पर्याय मिलता है।

1. पानी के अर्थ

व्यवहार में प्रसंगवश अर्थ ज्ञान इस प्रकार है:—

(क) पूजा के निमित्त पानी को जल कहा जाता है, यथा—ठाकरां दा जल, गंगाजल, आदि। जिस पात्र में गंगाजल रखा जाता है उसे गंगाजली कहते हैं। वाद-विवाद में यहां तक समस्या खड़ी हो जाती है—कि सत्यापन के लिये एक दूसरे को गंगाजली सिर पर धारण करने के लिये कहा जाता है जिसका अभिप्राय यह है—कि गंगाजली उठाने वाला यदि झूठ बोलेगा तो नरक का भागी बनेगा।

(ख) मन्दिर में देवपूजा का जल आचमन के लिये चांदी या ताम्बे के पात्र 'कूण्डू' में रखा हुआ चरणामत (चरणामृत) पुकारा जाता है जिसे तीन बार आचमनी से मन्त्रोच्चारण सहित पान कराया जाता है।

सांडू के मैदान में लगने वाली नलवाड़ी, रंगनाथ के मेले, बेड़ीघाट का आनन्ददायक सांयकालीन भ्रमण ये सभी बातें तो अब समाप्त हो गई हैं। ल्हेड़ के बाग की स्वादिष्ट अलीची अब कहां खायें ? पानी के आने से अब सब कुछ समाप्त हो गया। हे प्रिय! चलो अब नई दुनियां (नये शहर) का निर्माण करें।

इस लोक-गीत में जहां अतीत के खो जाने पर वेदना प्रकट की गई है वहां नव निर्माण के लिए कटिबद्ध होना भी दर्शाया गया है।

ऊपरलिखित बिलासपुर के लोक गीतों ने मानव वेदना का सूक्ष्म चित्रण किया है। चाहे मानव मृत्यु पर शोक हो, ससुराल में बहू की तड़पन हो, पत्नी से विछुड़ने का दुःख हो, विवाहित युवती की अपने मां बाप से मिलने की चाह हो, राजनैतिक उथल पुथल पर क्षोभ हो, अपने शहर का खो जाना हो, सभी हृदय-विदारक परिस्थितियों को इन लोकगीतों ने सहज ढंग से चिरंजीव कर दिया है। इन्हें पढ़ कर अथवा गा कर भवभूति के शब्द याद आते हैं—

"अपि ग्रावा रोदत्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्"।

—गौतम कुटीर,
जनता सैक्टर नं0-2,
बिलासपुर (हि0 प्र0)-
174001।

(घ) खड्ड—बरसाती नदी जिसमें बरसात में पानी अधिक वेगशील और अन्य ऋतुओं में बहुत कम जैसे—कुणाह, मान, पुग आदि हमीरपुर में।

(च) नाल—बहुत कम पानी वाला परन्तु वर्षा में एक दम प्रवाहशील।

(ज) कुहल—'कुल्या' जो खेतों की सिंचाई के लिये अथवा घराट 'पनचक्की' चलाने के लिये नदी या खड्ड से निकाली गयी हो।

(झ) छहरूड़—प्रपात जिसे बम्बा भी कहते हैं जो ऊँचाई से गिरता है अथवा बांस की नाली लगाकर जिसकी धारा नियमित की जाती है। इस धारा में प्रायः लोग स्नान करते हैं। इसका पानी गर्मियों में शीतल और शीतकाल में गर्म होता है।

(ट) छरांह—पुण्य सलिल वाला प्रपात जिसमें स्त्रियां सन्तान की कामना के लिये स्नान करती हैं।

2(2) सीमित स्त्रोत

पेय अथवा दैनिक व्यवहार के लिये घर के आस पास मिलने वाले स्त्रोत ये हैं।

(क) नौण जहां पानी भरा जाता है और स्नान करने की भी सुविधा होती है।

(ख) बौड़ी—बां—वापी जिसका पानी पीने के लिये होता है।

(ग) बौड़ू—वापी का छोटा प्रकार होता है।

(घ) खूह—कुआं—दो प्रकार का होता है एक गहरा जिसमें से रस्सी द्वारा पानी खींचा जाता है और दूसरा पौड़ियों वाला-जहां नीचे उतर कर पानी भरा जाता है।

(च) तला—ताल-तालाब वर्षा का रूका हुआ पानी या नदी नाल का पानी जहां रोका जाता है। यह गहरा होता है। इसमें से थोड़ा, थोड़ा पानी झरता रहता है।

जहां वर्षा का पानी रोका जाता है—और जिसका प्रयोग सारा साल किया जाता है ऐसे जलाशय के प्रकार ये हैं—

(छ) कुड्ड 'कुडया', यह पहाड़ के अन्दर खोद कर बनायी जाती है। छप्पर से वर्षा का पानी इसमें गिराया जाता है जिसे छीनीआ दा पाणी कहते हैं। इसके अन्य नाम खात्ती और खाई हैं।

(ज) पुक्खर—निम्न धरातल पर वर्षा का संचित पानी इसमें कई दिनों तक रहता है।

(झ) डक्क—बान्ध, इसमें नदी नाल का पानी बांधा जाता है।

पानी के निकास के लिये नकाल कहते हैं। किसी जलाशय या घर के व्यवहार के पानी को निकालने के लिये जो नाली बनायी जाती है उसे चला कहते हैं। गहरे

अकालमृत्युहरणं भवव्याधि विनाशनम् ।
विष्णुचरणोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ।।

(ग) भोजन में व्यञ्जन के रस या तरी को पानी कहा जाता है । हरी और सरस वस्तु तरबूज, खट्टे, मीठे आदि के तरल पदार्थ को भी पानी कहा जाता है ।

(घ) रसायन में भभके से खींचा हुआ रस अर्क या पानी कहा जाता है। जैसे-लाइचीआं दा पाणी, 'इलायची का पानी' सफाणी—सौंफा दा पाणी 'सोए सौंफ का पानी' आदि का व्यवहार है ।

(च) बोटी 'पाचक' के पास लुगड़ी को चौलां दा पाणी कहा जाता है ।

(छ) भोजन के उपरान्त पात्र में लगे शेष अन्न को पानी से धोकर पशुओं के निमित्त रखा जाता है। इसे धो-धुआणी कहते हैं ।

(ज) पाणी पाणी होने का अर्थ डर के मारे या गर्मी में पसीना छूटना है ।

(झ) पानी का व्यवहार मान प्रतिष्ठा आदि के मापदण्ड के लिये भी होता है यथा:—

सांजो दुस्सादा मियां कितणे पाणीए च है ।
'हमें दिखाई दे रहा है । (कि) मियां कितने पानी में हैं' ।

(ट) सुनार के पास पीतल पर चांदी का पुट और पीतल या चांदी पर सोने का पुट 'सुन्ने दा पाणी' कहा जाता है ।

इस भांति अभिधा तथा लक्षणा द्वारा पानी के विविध अर्थ हैं प्रसंग वश जिनका व्यवहार हिमाचली में व्यापक रूप में किया जाता है ।

2. पानी के स्रोत

चल और अचल स्थिति में पानी के विविध स्त्रोत हैं जिनका वर्णन इस प्रकार है:—

2.(1) प्रवाह-शील

निरन्तर प्रवाहशील स्त्रोतों की गणना इस प्रकार की जाती है—

(क) समुन्दर–समुद्र तो हिमाचल प्रदेश से बहुत दूर है परन्तु बरसात में जहां भी अथाह पानी दिखाई देता है, उपमा में उसे समुन्दर कहा जाता है ।

(ख) दरया–बड़ी नदी को कहा जाता है जिसे अवगाहन या तैरने से भी पार करने में कठिनता होती है जैसे—ब्यास, सतलुज आदि ।

(ग) नदी–दरया में मिलने वाले सहायक नदी नद जैसे–बिनुआ, न्यूगल आदि कांगड़ा में ।

(ख) धार—पर्वत की चोटी से गिर कर आने वाला पानी ।

(ग) बाह—नदी का बहाव, यदि दो या तीन की संख्या में हो तो इस शब्द का प्रयोग होता है ।

(घ) उआर पार—आर पार, वर्षा में नदी के प्रवाह के लिये इस शब्द का प्रयोग है । इसके समान प्रयोग 'दरया चढ़ना' या 'खड्ड चढ़णी' भी व्यवहार में है ।

(च) कुहरू—दो नदियों के संगम स्थान पर जहां बरसात में एक नदी का पानी इतना अधिक और तेज होता है जिससे दूसरी नदी का पानी रुक जाता है और आस पास के क्षेत्रों को बांध में घेर लेता है । इस रुके हुए पानी के लिये कुहरू शब्द का प्रयोग है ।

5. उद्‌गम स्त्रोत

जलाशयों में जहां से पानी निकलता है उन स्त्रोतों के नाम इस प्रकार है–

(क) सीर—पर्वत या भूमि के निम्नतल से निकलने वाले छोटे छोटे स्त्रोत । कहीं कहीं तो पानी ऊपर से गिराने के लिये सिहमुख बनाये हुए मिलते हैं जैसे भागसुनाथ में ।

(ख) कूण्डी—सरोवर या कुएं का निम्नतल जहां से पानी बुद बुदाता हो ।

6. प्रपा

पर्वत यात्रा में पानी सर्वत्र सुलभ नहीं है । यात्रियों की सुविधा के लिये स्थान स्थान पर पानी पिलाने का प्रबन्ध होता है । इसे पुण्य कार्य समझा जाता है ।

(क) भरो—घास की बनी झोंपड़ी में प्रपा का निर्माण होता है । कहीं-कहीं पर पीपल या बट की घनी छाया में पत्थरों से बने ऊंचे 'टयाला' पर पांच दस पानी से भरे घड़े रखे होते हैं । यात्री वृक्ष की शीतल छाया में बैठकर विश्राम करते हैं और पानी का आनन्द लेते हैं ।

(ख) धरम्याणा—वर्ष या कुछ महीनों के लिये भरो लगाने का संकल्प कुछ लोग करते हैं । इसे धर्मार्थ पानी कहा जाता है । एक या दो घड़े प्रतिदिन मन्दिर में देना भी धर्म समझा जाता है ।

(ग) चट्ठ—जलाशय-कूप, वापी आदि के पास ईंट पत्थर लगाकर एक भाग का निर्माण किया जाता है जिसमें समय समय पर लोग पानी के घड़े डालते रहते हैं यह पशुओं के लिये होता है क्योंकि वे कूएं से पानी पीने के लिये असमर्थ हैं । कभी-कभी लोग अपने पशुओं को कूएं के पास ले आते हैं उन्हें स्नान कराते हैं और पानी पिलाते हैं । इससे पानी घर तक दूर ढोने में श्रम लघुता होती है ।

1976

कुएं या कुड्ड के पास छोटा सा गर्त्त बनाया जाता है जिसमें वर्षा से धुली पौड़ियों का पानी रोका जाता है जिसमें पीने का पानी स्वच्छ रहे इस गर्त को चभच्चा कहते हैं। जब यह गन्दे पानी से भर जाता है तो इसकी सफाई की जाती है। इस क्रिया को चुटणा कहते हैं।

3. पानी के प्रकार

भौतिक गुणों के आधार पर पानी के अनेक प्रकार हैं जिनमें प्रमुख ये हैं :—

(क) खारा—क्षार, जिसमें स्वाद न आये।

(ख) लूणका—नमकीन, गन्धक वाले स्त्रोत से निकलने वाला पानी जिसे पीकर त्वचा के रोग और उदर विकार ठीक हो जाता है।

(ग) मिट्ठा-मीठा पानी जो स्वास्थ्य वर्धक और स्वादु हो। इसे स्वादला पानी भी कहते हैं।

(घ) कसैल्ला—रुका हुआ देर का पानी जो पीने योग्य न हो।

(च) खोहदला—मटैला पानी जिसमें कीचड़, मैल घुली हुई हो।

(छ) चिक्कड़—कीचड़ वाला पानी

(ज) गारा—जिसमें मिट्टी ही मिट्टी हो और पानी बाहर न निकल सके।

(झ) गार-कुएं या तालाब में जमी हुई मिट्टी वाला पानी।

(ट) लील्ला—सर्दियों में मन्द मन्द बहने वाला शान्त नदी का पानी।

(ठ) ततुआणी—गर्म पानी का स्त्रोत जैसे कि मणिकर्ण में पाया जाता है।

(ड) बर्फान्नी—हिमाच्छादित शिखरों से बहने वाला ठण्डा पानी।

(ढ) खाड्डू—खड्ड का पानी जो सर्दियों में ठण्डा और गर्मियों में गर्म रहता है।

इसके अतिरिक्त पानी का गुण इन विशेषणों से भी प्रकट किया जाता है—

तत्ता 'गर्म' कोस्सा—'कोस्णा' 'कोस्ण, ठण्डा, 'शीतल' हौला, हल्का, भारी, आदि।

4. वेग गति

पर्वत मालाओं में कल्लोल करता पानी अपनी अनेक छटाएं दिखाता है कहीं पाषाणों से टकराता इतना तीव्र और कहीं विश्राम स्थलियों में इतना शान्त प्रतीत होता है जिसका वर्णन कठिन है। पानी के वेग और गति के लिये ये शब्द मिलते हैं—

(क) छहरा—पत्थरों से टकराता हुआ पानी जहां तेज धारा में बह रहा हो और जिसे पार करना यात्री के लिये कठिन हो। यदि पांव फिसले तो चकना चूर होने में कोई कसर बाकी नहीं रहती है।

खुश्राजा—वर्षा का देवता माना जाता है। जब नदी में बाढ़ आये तो ड्रैंई 'मल्लाह' खुश्राजा की पूजा करते हैं। छोटी छोटी रंगबिरंगी झण्डियां जल में पत्र पुष्प सहित प्रवाहित करते हैं। मक्की के आटे का रोट और कड़ाह 'हलवा' भेंट करते हैं।

नदी में पानी की ध्वनि को कल कल, छल छल कहा जाता है। एक दूसरे पर पानी के छींटे मारने को छपाक्का कहा जाता है। भीगने के लिये 'सिजणा' और भिगोने के लिये 'सेड़ना' शब्द का व्यवहार है।

बर्षा में रुके पानी में हो रही बून्दा बान्दी से बने 'बुदबुदों' को पटार कह कर पुकारते हैं।

बत्तर—फसल बीजने से पहले जो वर्षा भूमि को उर्वरा करने में सहायक होती है—उसे बत्तर कहा जाता है। बत्तर होने पर किसान बिजाई का काम आरम्भ करते हैं। मक्की बीजने के लिये बत्तर की प्रतीक्षा की जाती है।

10. यातायात के साधन

पानी को पार करने के लिये प्रमुख साधन ये हैं—

(क) पुल—स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त कई नदियों पर पुल बान्धे गये हैं। इससे यातायात में विशेष सुविधा हो गई है।

(ख) बेड़ी—मनुष्यों, पशुओं और अन्य वस्तु जात को नदी के पार पहुँचाने में विशेष रूप में सहायक है।

(ग) किश्ती—यात्रियों को पार लगाने में आरामदायक है।

(घ) खटनाऊ—जहां बेड़ी, किश्ती का प्रयोग सफल न हो सके ऐसी अवस्था में तेज नदी की धारा को पार करने के लिये ड्रैंई 'मल्लाह' भैंस की दो खालों में श्वास से वायु भर कर, उनके ऊपर खाट धर कर और एक या दो यात्रियों को बैठा कर नदी के पार तैर कर पहुंचाते हैं। बहुधा अकेला ड्रैंई खाल पर चढ़कर और अपनी पीठ पर एक यात्री को बिठा कर नदी पार कराता है। यह बड़े साहस का काम है। यदि भोला भाला यात्री दुर्भाग्यवश अपने हाथ पैर छोड़ दे तो उसे जल समाधि लेने में देरी न लगे। ऐसी संकटकालीन स्थिति में ड्रैंई यात्री को पार पहुंचा कर प्रसन्नता व्यक्त करता है और पुरस्कार की कामना इन शब्दों से करता है—

बोल बाले बक्षियां दे, जै जेश्रा, मस्ती मिली जाए माहराज।

(च) छाड़—नदी में रोड़े 'बड़े खड़े पत्थर' पग पग पर रखे जाते हैं जिन पर कदम कदम बढ़ा कर यात्री नदी पार करता है। कभी प्रवाह में पत्थर दूरी पर भी रखा जाता है जिस पर थोड़ा उछल कूद कर यात्री पार जा सकता है।

976

7. पात्र

घरों में भांति भांति के पात्र व्यवहार में लाये जाते हैं । जिन में मिट्टी के पात्र इस प्रकार हैं —

मट्ट —मटका जिसमें बीस घड़ों के लगभग पानी के संग्रह की क्षमता होती है।

चाट्टी, घड़ा, घड़ोल्लू आदि अन्य पात्र हैं ।

हण्डू, पारू, औली छोटे पात्र हैं ।

तरसेहड़ा—ताम्बे के पात्र को कहते हैं ।

चरोट्टी, चरोट्टू, गागर, गंगासागर, मसरवा, गड़बू, लोटकू, ग्लास आदि पीतल के पात्र होते हैं कलस, छूच्छी, आचमनी आदि पूजा पात्र चांदी के होते हैं।

छाम्बा—प्रायः पात्र जूठे कम किये जाते हैं । भ्रम परिहार के लिये अंजलि बान्ध कर पानी पी लिया जाता है । अंजलि द्वारा पान के लिये इस शब्द का प्रयोग है । चूट्टी-चुल्लू भर अंजलि में रखे पानी से कूला 'चुल्ली' के लिये इस शब्द का व्यवहार है ।

8. साधन

पानी भरने के लिये इन साधनों का प्रयोग किया जाता है—

(क) बैंहगी—बहंगी बांस के डण्डे पर बनी यह झूले की तरह कन्धों पर लटकती है । दोनों ओर लगाई रस्सी के नियन्त्रण में दो या चार घड़े ले जाने की इसमें क्षमता होती है, इसका व्यवहार केवल पुरुष करते हैं ।

(ख) दोघड़—दो घड़ों को भरकर सिर पर ले जाने का व्यवहार स्त्रियां करती हैं ।

(ग) बिन्ना—मूंज, घास या कपड़े से वर्तुलाकार गुंथी चुटिया को सिर पर धारण कर स्त्रियां घड़े उठाती हैं ।

9. वर्षा

नद नदियों का प्रदेश होते हुए भी यहां का जन-जीवन वर्षा पर निर्भर है । यदि वर्षा समय समय पर होती रहे तो धरती शस्य-श्यामला और जीवन सुखमय होता है अन्यथा अनेक कष्टों का सामना करना पड़ता है । अम्बर में घनघोर घटा छा जाती है । बिज 'बिजली' चमकती है । गड़ाक्के 'गर्जन' होते हैं । यदि वर्षा मन्द मन्द हो तो इसे किण किणाट, किणी-किणी, भूर-भूर, सिम समाट आदि शब्दों से व्यक्त किया जाता है । यदि वर्षा तेज हो तो इसे द्राड़ कहा जाता है । न्हेरी 'अन्धेरी' और तूफान से आने वाली वर्षा को 'पलच्छ' कहा जाता है । ओले पड़ने को आह्ण कहते हैं ।

है। कन्या को तथा अन्य सम्बन्धियों को भी नदी, सरोवर तक जाकर विदा किया जाता है। विवाह पूजा आदि संस्कारों में कलश रख कर तथा समय-समय पर मार्जन, तर्पण और आचमन कर पानी का महत्व दर्शाया जाता है।

घर से बाहर निकलते ही यदि पानी का भरा घड़ा मिल जाए तो शुभ शकुन समझा जाता है। यदि इसके विपरीत खाली घड़ा मिले तो यात्री तुरन्त घर लौट आता है क्योंकि यह अशुभ समझा जाता है। विवाह, यज्ञ आदि के समय वर्षा की बून्दा बान्दी हो जाए तो शुभ समझा जाता है। प्रातः स्नान के उपरान्त देवताओं की प्रतिमा पर पानी चढ़ाना, पीपल या वट वृक्ष को पानी से सिंचित करना पुण्य माना जाता है। अतिथि सेवा में पानी से हाथ पैर धुलाना सत्कार माना जाता है। अनेक कार्यों में पानी की छिड़कन शुद्धता के लिये की जाती है।

इस प्रकार पानी के महत्त्व के साथ पानी से सम्बन्धित शब्दावली का भी विशेष महत्त्व है। बिजली के प्रयोग से नल कूप उलीचन यन्त्र (पम्पिंग सैट) लगने पर पानी से सम्बन्धित कई शब्दों का शनैः-शनैः लोप हो रहा है जैसे बैंहगी, दोघड़, बिन्ना, मट आदि। देश और काल की परिधि में पानी से सम्बन्धित शब्दों का संग्रह तुलनात्मक दृष्टि में महत्वपूर्ण है नहीं तो यह सब भविष्य में छायावाद बन कर रह जाएगा जैसे महाकवि जयशंकर प्रसाद का कामायनी में वर्णन चिन्ता सर्गः—

नीचे जल था, ऊपर हिम था,
एक तरल था, एक सघन,
एक तत्व की ही प्रधानता
कहो उसे जड़ या चेतन।

—द्वारा श्री संत राम शर्मा,
70, दी माल,
शिमला-1

(छ) गाहण—नदी पार करने में यदि कोई अन्य साधन सुलभ न हो तो यात्री तैर कर या छड़ी 'सोट्ठी' हाथ में लेकर पानी की गहनता मापता जाता है, और पार पहुंच जाता है। गहनता का माप दण्ड इस प्रकार बताया जाता है—

गोड्डें गोड्डें 'घुटनों तक', पट्टें पट्टें 'जङ्घा तक',
लक्कें लक्कें 'कटि पर्यन्त', गलें गलें 'कण्ठ तक',
कन्ने कन्नें 'कान तक'।

यदि पानी सिर से ऊपर चढ़ जाए तो बांस का परिमाण बताया जाता है—इक नाहल, दो नाहली डुग्गा आदि। जहां पानी बहुत गहरा हो उसे लील गगन और (अ) थाह कहा जाता है ऐसी स्थिति में जहां पत्तण 'पार करने का स्थान' या अन्य साधन न हो वहां तारू 'तराक' अपने साहस का परिचय देता है। तारी 'तैराकी' में छटनाऊ मारना 'लहरों' को बाहुबल से काटकर, उछल कूद कर आगे बढ़ना, नकजुभ्भी मारना 'पानी के अन्दर गोता लगाना' विशेष तैराकी मानी जाती है। सखणोत्रू 'नया तैराक' जोश में आकर वेग में बढ़ जाता है जिसका परिणाम, नकाक्के, गोते खाना होता है। कभी कभी नदी में रूढ़ना 'बह जाना' भी दिखाई देता है। तैराकी शिक्षण बिधि में एक लोकोक्ति है—

मार खाई पढ़ना औन्दा (कने) गोत्तेआं खाई तरना औन्दा। जिसमें दर्शाया गया है कि पीट खाकर पढ़ना आता है (और) गोत्ते खाकर तैरना आता है।

पर्वत की कन्दरा में जहां पानी हो उसे गुफा कहते हैं। जहां बैठने का स्थान हो उसे जलाधारी कहते हैं जिसमें ऊपर पर्वत से पानी सिमसिमाता रहता है।

पानी में जीव जन्तुओं से सदा भय बना रहता है। उन जन्तुओं में प्रमुख हैं-सर्प, मच्छी, डीहन्ना, जोंक।

निश्चल पानी में सुआल 'शैवाल' या जल नीली आ जाती है। इसे हटा कर पानी स्वच्छ किया जाता है और व्यवहार में लाया जाता है।

नदी के पास घराट 'पनचक्की' विशेष लाभप्रद है। कहीं कहीं पानी के कूल भयावह भी पाये जाते हैं। क्योंकि यहां मसाण 'श्मशान' होते हैं। लोग सुनाते हैं–कि रात्रि को मशालें लेकर मसाण में नदी के तट पर प्रेत जल धीर बन कर नृत्य करते हैं। ऐसे जल कूल का नाम जलोद्धर दिया जाता है। वापी का नाम भी चुड़ैल बौड़ी जैसे शिमला में सुना जाता है।

11. शकुन विचार

पानी की गणना शुभ लक्षणों में है। यात्रा करते समय पानी से भरा कलश द्वार पर रखा जाता है। कलश से पानी द्वारा मार्जन और बन्दना कर यात्रा आरम्भ की जाती

न हो तो तलवारें लाठियां और डागरे होते हैं । ऐसा लगता है कि हथियार बन्द फौज कहीं हमले करने को तैयार हो रही हैं । इस से पहले प्रत्येक गांव से लोग नाचकर आते हैं और वे भी इसी तरह शस्त्रों से शोभित होते हैं, उनका बड़े आदर से स्वागत होता है । सारे लोगों का एक अथाह हजूम मन्दिर के सामने एक ही लय में एक ही गति में गाते हैं । गीत की लय और स्वर वीर-रस में हैं । चार छः आदमी गीत के पहले बोल बोलते हैं फिर सारा हजूम इकट्ठे ऊंचे स्वर में बोलता है । "वर्मा न जाए विरशुआ वर्मा न जाए" ऐ महावीर बर्मा मत जाना बल्कि उत्तरा खण्ड में ही रक्षा को रहना । विशेषता इस बात में है कि हजारों लोग शस्त्र हाथों में रखते हुए जनसमूह एक ही साथ नृत्य करते हैं । गीतों से आसमान गूंज जाता है । बूढ़ा, बाल, छोटा, बड़ा झूम झूम जाता है। घण्टों मन्दिर के गिर्द नाचते नाचते चक्कर काटते हैं । उनकी एकता की परिभाषा मिलती है कि कोई झगड़ा फसाद नहीं होता आपसी प्रेम से कोई एक हाथ अपने दूसरे के कन्धों पर रखते हैं । पृथ्वी हिलती हुई नजर आती है । हर्ष और जोश का वह नजारा देखने में मिलता है जिसका कोई उदाहरण नहीं । फिर टोलियां बंट जाती हैं । अलग-अलग मालाएं लगती हैं । फिर अपनी अपनी पसन्द नाटी में नृत्य होता है । कोई नाटी तेज स्वर की कोई धीमे स्वर की, कहीं गीत कहीं लामन कहीं झूरियां तो कहीं मुजरा । सारी रात इस तरह का जागरण होता है, लोक गीतों और लोक नृत्यों का ऐसा उदाहरण कहीं भी नहीं मिलता । एक और विशेषता इस मेले की यह भी है कि इस मेले में केवल लोक गीतों और लोक नृत्यों को ही सुरक्षित रखा गया है । इसमें किसी भी प्रकार की दुकान लगने की इजाजत नहीं होती । कोई मुशतहरी(Advertisements) की इजाजत नहीं होती । शराब बेचने व पीने की भी इजाजत नहीं होती । मगर लगता यूं है कि कोई भी नहीं होगा कि जिसने पी न हो । न मालूम मस्ती कैसे छा जाती है । देख कर दुनियां हैरान होती है । यही नहीं, और भी इस मेले की बड़ी विशेषताएं हैं जिनसे प्रदेश अथवा बाहर के लोगों को सबक सीखना चाहिये । हर घर से सारे इलाके के लोग एक पत्था (कोई दो किलो अनाज) देता है वह अनाज देवता के भण्डार में इकट्ठा किया जाता है । इसी अनाज में से जागरे के दिन धाम का भोजन पकता है और बाहर से आए लोगों को खाना खिलाया जाता है । इलान किया जाता है कि कोई भूखा तो नहीं । वे आए और खाना खाए । उसी अनाज में से हरिजनों को आटा मुफ्त दिया जाता है । देवता के भण्डार में फिर भी अनाज जमा रहता है । जो गांव के मुशतिरका कारजों के लिए प्रयोग किया जाता है । साधू सन्तों को दिया जाता है । और गरीबों को जिनकी फसल फेल हो या शादी गमी का काज हो वह अनाज बतौर उधार दिया जाता है आपसी प्रेम भावनाओं का कितना बड़ा उदाहरण है । आज के युग में ऐसा उदाहरण शायद ही कहीं मिलता होगा ।

अब मैं इस मेले की ऐतिहासिक घटना पर प्रकाश डालता हूं । लोक कथाओं के अनुसार जब महाभारत की घटना घटी । और युद्ध में सर्वनाश हुआ तो विजयी धर्मराजा युधिष्ठर ने देश की नई तामीर का काम आरम्भ किया बहुत सरगरम परिश्रम और धर्म कर्म किए । इसके पश्चात् देश में अमन व शान्ति हुई । लोग आराम का सांस लेने लगे और धर्म कर्म के कामों में जुट गए । दुष्टों पापियों और राक्षसों का सारे देश में खातमा कर दिया गया था । जो जिंदा बचे वे पहाड़ों में जंगलों और गारों में छुप कर जिन्दगी के बाकी दिन गुजारने लगे । फिर वक्त आया कि पाण्डव भी भारत माता की

मेला जागरा

—काहन सिंह जमाल

"**भीरमे न जाए बिरशुम्रा**" ए शिव के वीर हमारी श्रद्धा पर संदेह न करना, कुछ सीमाओं के कारण वर्ष में श्रद्धा की अभिव्यक्ति में सम्भवतः कुछ न्यूनताएं रही हैं। महासू देवता का एक व्होठा 'विरशु' माना जाता है उसका जागरा जुब्बल में कई गांवों में मनाया जाता है। उसी जागरण में नृत्य के अवसर पर उपर्युक्त पंक्ति बार बार दोहराई जाती है।

सारे भारत में भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न प्रकार के मेले लगते हैं। इन समस्त मेलों के पीछे कुछ न कुछ भावनाएं मतलब उद्देश्य (purpose) या तारीखी घटनायें राष्ट्रीय स्तर की होती है और कुछ मुकामी-राष्ट्रीय स्तर की घटनाएं ऐसी है जैसे रामायण और महाभारत की घटनाएं इन घटनाओं की याद ताजा रखने के लिए देश भर में भिन्न भिन्न त्यौहार मनाएं जाते हैं।

इस क्षेत्र की भाषा संस्कृत व हिन्दी भाषाओं का बिगड़ा रूप है इससे पहले कि मैं इस मेले का जिक्र करूं मैं इस मेले की रूप रेखा बताना जरूरी समझता हूं। यह मेला भादों मास की शुक्ल पक्ष की चौथ में लगता है। यह एक गांव में लगता है। उस दिन देवता महासू का जन्मदिन मनाया जाता है। देवता महासू की पूजा ऊपरी शिमला, जौंसार बावर सिरमौर में होती है, यह मेला भी इन्हीं स्थानों में लगता है। यह मेला रात के समय लगता है। लोग घरों और आंगन की सफाई कई दिनों से शुरू करते हैं। मेले के अगले दिन घर का एक एक आदमी जिसे कि देवता ने पहले स्वीकार कर रखा हो, देवता का गणी कहलाता है। उसे देवता के मन्दिर में रात को सोना पड़ता है। व्रत रखना पड़ता है जागरा का पूजन समाप्त होने के बाद केवल मन्दिर में ही भोजन कर सकता है। दिन को देवता का चिन्ह एक बावड़ी के पास ले जाते हैं। सब गांव के लोग साथ जाते हैं, जनता को उस जल के छींटें डाले जाते हैं जिससे कि देवता ने स्नान किया हो। वापसी में गीत गाते लोग वापिस मन्दिर में आ जाते हैं। फिर मन्दिर में ही भोजन पकता है। और सब लोग साथ साथ भोजन करते हैं। शाम को देवता का पूजन होता है मन्दिर के सामने लकड़ियों के ढेर इकट्ठे किए जाते हैं। फिर एक खम्बे पर बड़े पत्थर रखकर जली हुई लकड़ियां ऊपर रखी जाती हैं। उसे चीड़ा बोलते हैं। इस का मतलब यह है कि धूनी जला कर महासू (महाशिव) के जन्म दिवस को तमाम रात जागरण करके मनाया जाता है। देवता का पुजारी हाथ में जल और पूजन सामग्री लेकर इन चीड़ों को पूजने मन्दिर से निकलता है तो उस समय जनता उसके स्वागत को हाथ में मशालें लिए खड़ी रहती है। जिन के हाथ में मशालें

सोमसी

एक बार जाते हैं । महासू देवता को अपनी फसल का कुछ न कुछ हिस्सा वहां चढ़ाते हैं । बेशक चाहे एक मुट्ठी अनाज ही क्यों न हो । भेंट का नाम "कूत" दिया जाता है । यात्रियों के लिए वहां खाने व सोने का इन्तज़ाम किया जाता है । इस ऐतिहासिक घटना के बाद आज तक भादों तक की चौथ व पंचमी को इसकी याद में जागरण किया जाता है और ऊपर लिखित ढंग से यह मेला मनाया जाता है।

—25 **III**, न्यू बरोक हरस्ट,
शिमला-3

यक्षगान

यक्षगान शब्द का शाब्दिक अर्थ यक्षों का गान है । कुछ विद्वानों का कहना है कि जुककलु शब्द का यह संस्कृतिकरण है । 'तेलुगु और कन्नड़ प्रदेशों में" यक्षों की आराधना का आचार है । यक्षों की आराधना करने वाली इस लोक जनता को जककुलवारू की संज्ञा दी गई होगी यह विचार डा० पी० एस० अप्पाराव ने प्रकट किया है । यक्षों को जो कि आराध्य माने गए हैं, वेष-भूषा धारण कर उन वेष-भूषाओं के गीत गाते हुए नृत्य करने से इनको यक्षुलवारु और जककुलवाड़ का नाम पड़ गया होगा ।

—मोदलि नागभूषण शर्मा
—माध्यम, मार्च–अप्रैल 1968

धरती छोड़ कर स्वर्ग में जाने की तैयारी करने लगे । महाराज युधिष्ठर पांचों भाईयों सहित उत्तरा खण्ड (हिमाचल) में कैलाश पर्वत पर प्राण त्यागने के लिए चले । उन्होंने अपना कैम्प पहाड़ी मुकाम उनहोल पर लगाया । महाराज युधिष्ठर ने वहां एक मन्दिर बनवाया । उस मन्दिर को बनवा कर खाली छोड़कर लुप्त हो गए । इस घटना की सारे देश में चर्चा हुई और जनता को दुःख हुआ । यह खबर जंगलों में छुपे राक्षसों के कानों तक भी पहुंच गई । वह लोग जंगलों से निकलकर आबादी की तरफ आने लगे —तथा प्रजा को सताने लगे ऋषि मुनियों के पाठों और तपस्या को भंग करने लगे, इस तरह भय की लहर फैलने लगी । मुमाम तिऊनी के पास ही एक गांव में एक पण्डित हूणा नामी रहा करते थे । उनके चार बेटे थे । हूणा पण्डित तपस्वी त्यागी योगी महात्मा थे । वह तपस्या में बैठे थे कि उनके चारों बेटों को राक्षसों ने बारी बारी मार दिया । जब वह अस्नान करने पब्बर नदी पर आते थे । एक दिन उनकी माता को भी राक्षस ने पकड़ लिया मगर पतिव्रता स्त्री की रक्षा के लिए दुर्गा प्रकट हो गई और पतिव्रता की रक्षा की । दुर्गा ने कहा कि मैं तुम्हारी रक्षा के लिए आई हूं । बाकी मैं अभी कुछ नहीं कर पाऊंगी तू ऋषि को जगा और अमरनाथ में शिव के पास भेज दे । वहां पहुंचाने का काम मैं कर लूंगी । हूणा पण्डित को तपस्या से उठाया गया । वारदात सुनाई गई और उन्हें दुर्गा ने अपनी शक्ति से अमरनाथ पहुंचा दिया उन्होंने शिव की तपस्या की और भगवान शिव ने उन्हें दर्शन दिए भगवान शिव ने हूणा पण्डित के कमण्डल में फूल डाले और आदेश दिया कि उनहोल में धर्मराज युधिष्ठर ने एक मन्दिर बनाया है तुम वहां जाओ । इन फूलों को मन्दिर में रख देना । फिर वहां भादों मास की चौथ को धूनी लगा कर जागरण करो वहां पर महासू का जन्म होगा । हाटकोटी में महाशक्ति देवी दुर्गा का जन्म होगा साथ में और देवताओं को भी पृथ्वी पर धर्म कर्म की रक्षा के लिए भेजा जाएगा । यह सभी देवता दुर्गा से शक्ति प्राप्त करेंगे । सभी राक्षसों का नाश करगे ।

हूणा पण्डित ने ऐसा ही किया । वे उनहोल में तपस्या करने बैठ गए । उनहोल के सुनसान मन्दिर में भादों की चौथ को महासू देवता प्रकट हो गए । हाटकोटी में दुर्गा की एक बड़ी मूर्ति प्रकट हो गई । मन्दिर में घंटियां, घड़ियाल, ढोल तथा नगारे बजने लगे हर दिशा में एक ऐसा प्रकाश हो गया जिसमें एक आनन्द था । महासू देवता जिसे बोटा भी कहते हैं ने अपने दूसरे देवताओं को आदेश दिया कि वह उत्तराखण्ड से भिन्न भिन्न स्थानों का चार्ज सम्भालें और राक्षसों तथा दुष्टों का नाश करे । तुम्हारे वहां मन्दिर बनेंगें और तुम्हारी पूजा होगी । चालदा नामी देवता को उस राक्षस का वध करने भेजा गया । जिसने कि हूणा पण्डित के बेटों को मारा था । राक्षस ने इतने में अपनी फौज बना ली थी और मसूरी आदि से भी अपनी सहायता के लिए राक्षस बुलाए गए थे । मिनस के पास एक मुकाम पर युद्ध हुआ और राक्षस मारे गए । इसी प्रकार दूसरे स्थानों पर भी राक्षसों का नाश कर दिया गया । इसी प्रकार देवता बनाड़ संटोपी व सराठी का भी जन्म भादों की पंचमी को हुआ मगर यह देवता महासू देवता की कुमांऊ के अन्दर नहीं थे इनका सम्बन्ध सीधा दुर्गा से है और इनकी महत्ता सीमित क्षेत्र में ही होती है । जब कि महासू की महत्ता समस्त ऊपरी पहाड़ में जिसमें उत्तर प्रदेश के सभी पहाड़ी क्षेत्र शामिल हैं । लोग आज तक उनहोल को महानता के तौर पर साल में

(10) श्रेष्ठाचार (11) रस कवित्त (12) रघुनाथाष्टक (13) बलदेव सिंह पंचक (14) रघुनाथ सिंह पंचक (15) राम रस लहरी (महाकाव्य) (16) मनवृत्ति (17) अन्य स्फुट काव्य में मंडी नरेश भवानी सेन तथा गढ़वाल नरेश कीरतशाह की प्रशस्ति ।

दानलीला :

पाण्डुलिपि—परिचय तथा प्रामाणिकता:

दानलीला वृजराज की आरम्भिक और पहली रचना है। इसकी पाण्डुलिपि का आकार पृष्ठ 6.8" और 5.2" है। कुल पृष्ठ संख्या 8 है। एक पृष्ठ पर औसतन पंक्तियां ग्यारह हैं। पंक्तियों की कुल संख्या 87 है। छंद संख्या 19 है। मूल पाण्डुलिपि टीका-रानी गुलेर हरिपुर के पास से उपलब्ध हुई है। दानलीला का रचनाकाल और प्रामाणिकता पुष्पिका से स्वतः सिद्ध है :–

इति श्री दानलीला व्रत सम्पूर्णम् । समाप्तम् । शुभमस्तु ।। लिखतं वृजलाल ।। कातिक प्र० 22 श्री सम्वत् 1919।

वर्ण्य विषय :

प्रस्तुत ग्रंथ का वर्ण्य विषय गोपसहित श्री कृष्ण का राधा सहित गोपियों के साथ दानलीला का वर्णन किया गया है। कृष्ण द्वारा रासमण्डल रचाई जाती है। रचना के अन्तिम छन्द में दानलीला के गायक, श्रवण और महात्मय का प्रतिपादन किया गया है।

ध्यानाष्टक :

ध्यानाष्टक ग्रंथ की पाण्डुलिपि का आकार पृष्ठ 5.7"×5" है। कुल पृष्ठ संख्या पांच है। एक पृष्ठ पर की औसतन पंक्तियां 9 और कुल पंक्तियों का योग 47 है। एक पंक्ति में प्रयुक्ताक्षर 14 हैं। छन्दों की कुल संख्या 8 है। 6,7 और 9 पंक्तियां अक्षर 4 से 6 तक दीमक द्वारा खंडित हैं। ध्यानाष्टक का रचना काल संदेहास्पद है । कवि ने रचनाकाल दिए बिना ही 'इति सम्पूर्ण शुभं' लिखा है। इस ग्रंथ के बाद के पृष्ठों में 'गंगाष्टक' 'हनुमन्नाष्टक' तथा 'शमशेर सिंह पंचक' रचनाएं संगृहीत हैं । शमशेर सिंह का राज्य काल गुलेर पर सम्वत 1883-1934 रहा है[1] कवि ने शमशेर सिंह के राज्यकाल के मध्य ही ध्यानाष्टक का सृजन किया है । अतः अन्तः साक्ष्य के इस आधार पर ध्यानाष्टक का रचना काल सम्वत् 1919-34 के मध्य ही ठहरता है,

---

[1] अन्तिम गुलेर नरेश बलदेव सिंह पूर्वेतिहासज्ञ कविवर वृजराज जी तथा राज पुरोहित रामलाल शर्मा द्वारा तैयार की गई थी त्रिगर्त नृप नामावलि की मूल प्रति से ।

हिमाचल के अज्ञात कवि बृजराज का कर्त्तृत्व परिचय

—श्री कान्त प्रत्यूष गुलेरी

हिन्दी साहित्य के लिए 'बृजराज' नाम अभी अज्ञात है। हिमाचल प्रदेश को कवि बृजराज के कर्त्तृत्व पर गौरव होना चाहिए। अगर बृजराज को इस प्रदेश का हिन्दी का आदि कवि कह दिया जाए तो अत्युक्ति न होगी। 'बृजराज' का कर्त्तृत्व जितना विस्तृत और उत्कृष्ट है उतनी ही उनके राज्य को जनसमुदाय एवं हिन्दी साहित्य के जिज्ञासुओं के समक्ष प्रकाश में लाने की उदासीनता उनके आश्रय दाताओं ने दिखाई है। वृजराज के शिष्य और अंतिम गुलेर नरेश बलदेव सिंह ने 1910 ई० में छपी 'सहौड़ा माहात्म्य' कृत्ति में गुलेर राज्य की दशा का चित्रण एक काव्य पंक्ति में इस प्रकार किया है:—

"निर्धन राज्य अटल प्रभुत्ताई"

तो ऐसे निर्धन राज्य के आश्रयदाताओं से वृजराज के काव्य को प्रकाश में लाने की सम्भावना कैसे की जा सकती है? वृजराज गुलेर नरेश शमशेर सिंह, जय सिंह और रघुनाथ सिंह के राजाश्रित कवि थे। वृजराज के विस्तृत कर्त्तृत्व के परिचय देने से पूर्व उनके जीवन के बारे में कुछ जान लेना समीचीन होगा। बृजराज का वास्तविक नाम वृज लाल था। तत्कालीन गुलेर रियासत के निकट गांव माल्हा में आपका जन्म ज्येष्ठ-प्रविष्टे 27 सम्वत् 1903 वि० में रुद्रकवि के घर हुआ था। यह जन्म विवरण उनके कुल पुरोहित के पास वर्तमान समय तक सुरक्षित है। वृजराज वर्ण से सारस्वत ब्राह्मण और गोत्र से भारद्वाज थे। 73 वर्ष की आयु में श्रावण प्र० 8 सम्वत् 1976 वि० में स्वर्ग सिधारे थे। यह मृत्यु समय भी ब्राह्मण तिथिप्रकाशोयम् के प्रथम खंड में विद्यमान है। सम्वत् 1900 के बाद के साहित्य को विद्वानों ने आधुनिक काल नाम दिया है। बृजराज आधुनिक काल नाम दिया है। वृजराज आधुनिक काल के प्रथमोत्थान (भारतेन्दु युग) के कवि हैं। भारतेन्दु युगीन कवि रीतिकाल की काव्य-परम्परा का अनुकरण करते हुए 'ब्रजी' में कविता करते चले आ रहे थे। इसी काव्य परम्परा का मार्ग अनुगमन हमारे कवि 'वृज राज' ने किया है।

'वृज राज' की अब तक उपलब्ध कृतियां इस प्रकार हैं:—

(1) दानलीला (2) ध्यानाष्टक (3) गंगाष्टक (4) हनुमन्याष्टक (5) शमशेर सिंह पंचक (6) दुर्गाष्टक (7) मंगल शतक (8) नीतिशतक (9) रमल सार प्रश्नावली

दुर्गाष्टिक में भी कवि ने अपने उपनाम का प्रयोग प्रायः प्रत्येक छन्द में किया है। ग्रंथ की मूल प्रति कवि के अपने हाथ की है। इस प्रकार इस ग्रन्थ की प्रमाणिकता भी असंदिग्ध है।

वर्ण्य विषय :

दुर्गाष्टिक जैसा इस रचना के नाम से ही संकेत मिलता है दुर्गा की स्तुति में इसका प्रणयन हुआ है। दुर्गा के विभिन्न रूपों, महिमा और स्तुति ही इस ग्रन्थ का वर्ण्य विषय है। अन्त में मनो कामना पूर्ण करने की याचना स्वरूप एक छन्द रखा गया है।

मंगल शतक :

पाण्डुलिपि—परिचय :

"मंगल शतक" प्रबन्ध कृति का आकार पृष्ठ 12.7" × 8" है। पृष्ठों की कुल संख्या 12 है। एक पृष्ठ पर औसतन पंक्तियां 27 हैं। पाण्डुलिपि की कुल पंक्तियों का योग 328 है। ग्रन्थ को पांच तरंगों में समाप्त किया गया है। प्रथम तरंग में 14 द्वितीय में 11, तृतीय में 20, चतुर्थ में 17 तथा पंचम में 45 छन्द हैं। कुल छन्द मिलाकर 107 हैं। ग्रन्थ तत्कालीन गुलेर राज्य की टीका रानी उत्तमी हरिपुर निवासिन से उनके प्राचीन राजपुर पुस्तकालय से 5 जुलाई, 1963 को उपलब्ध हुआ था।

रचना काल और प्रामाणिकता :

'मंगल शतक' अवसर परक खण्ड काव्य का रचनाकाल कवि ने आरम्भ के छन्दों में संकेतिक कर दिया है। इसकी रचना चैत्र मास के शुक्ल पक्ष सम्वत् 1942 में हुई। गुलेर नरेश रघुनाथ सिह के राज्यभिषेक के अवसर पर ही इस ग्रंथ की रचना की गई ऐसा रचनाकाल बोधक छन्द से पता चलता है :—

सम्वत् मास पक्छ तिथ बारा।
बरनन कियो सुमति अनुसारा ।। मं0 श0 चौ0 13.

कवित्तः– शीता सुनु संग्या वेद निधि सुमयंक अंक
लिखि गति बंक सुभ संवत सुनायो है
कारक सकल भोग भाग अनुराग भरयो
मास मत सारक प्रकाश छिति छायो है
कवि "वृजराज" बूझि गणक समाज को सु
पाछ तिथ बार स्वच्छ लगन धरायो है
बैठे राजगादी में मृजादि रघुनाथ भूप
सादी सुनि कांन में प्रमान जस गायो है। (मं0 17 0 14 0 प्रथम तरंग)

ध्यानाष्टक की भाषा दानलीला से कहीं उत्कृष्ट है। पाण्डुलिपि की प्रामाणिकता के लिए प्रत्येक पद म 'वृजराज' का उल्लेख पाया जाता है।

देवी-देवताओं की स्तुति ध्यानाष्टक का विषय है। आरम्भ में गणेश जी की प्रथम गण फलस्वरूप वन्दना है। उसके बाद त्रिगुण रूप की स्तुति है। सरस्वती, महालक्ष्मी और काली की स्तुति 3 छप्पय छन्दों में है। इस कृत्ति से वृजराज का लोक देवी-देवताओं के प्रति गहन आस्था का बोध तो होता ही है, साथ ही भक्ति के क्षेत्र में उनका समन्वयवादी होने का भी प्रवल ठोस प्रमाण मिलता है।

शमशेर सिंह पंचक :

पाण्डुलिपि का आकार पृष्ठ 5.7″ × 5″ है। पृष्ठों की कुल संख्या 5 और एक पृष्ठ पर औसतन पंक्तियों की संख्या 9 है। कुल पंक्तियां सैंतालीस हैं। छन्द संख्या 5 है। पाण्डुलिपि की 8 और 9 पंक्तियां मध्याक्षरो से खंडित हैं। अतः साक्ष्य के आधार इस का रचना काल सम्वत् 1934 के आस पास का ही ठहरता है। गुलेर इस नामाऽवलि में शमशेर सिंह और जय सिंह के राज्यसीन होने का समय दिया गया है। अन्तिम गुलेर नरेश बलदेव सिंह ने अपने पितृ-पितृव्य का मरना वंशावली में श्रा. 1934 दिया है।[2] प्रत्येक कविता में वृजराज नाम अन्त में आ जाने से इसकी प्रामाणिकता सम्बन्धी सन्देह नहीं रह जाता।

इस रचना का वर्ण्य विषय शमशेर सिंह की भवन भव्यता, नरेश की दीर्घायु की कामना, समाज-वर्णन तथा राजप्रशस्ति ही रहा है। रीतिकाल के कवियों का स्मरण हो आता है, इन कवित्तों को पढ़कर।

दुर्गाष्टक :

पाण्डुलिपि परिचय तथा प्रामाणिकता :

पाण्डुलिपि का आकार पृष्ठ 12.7″ × 8″ है। पृष्ठ संख्या 2 है। एक पृष्ठ पर औसतन पंक्तियां 28 हैं। पंक्तियों की कुल संख्या 57 हैं। कुल छन्द संख्या 9 है। यह रचना अन्य अष्टक रचनाओं जैसे खंडित नहीं है। इस ग्रंथ की प्राप्ति टीका रानी उत्तमी हरिपुर से हुई है। दुर्गाष्टक के रचना काल का उल्लेख कवि द्वारा नहीं किया गया है। अन्तः साक्ष्य के आधार पर इसका रचना काल सम्वत् 1942 से पूर्व का ठहरता है क्योंकि दुर्गाष्टक के बाद के पृष्ठों में कवि का प्रबन्ध काव्य "मंगल शतक' लिया गया है। सम्भवतः मंगलशतक से पूर्व उन्होंने दुर्गा की स्तुति में इस अष्टक का सृजन किया हो।

---

[2] गुलेर नृप नामाऽवलि : राजा बलदेव सिंह।

सोम

"इति श्री नीति शतक कुंडलिया छन्द समाप्तं शुभ भूयात् ।। श्री सम्वत् 1950 वैशाख प्र० 28 भौमवासरे लिखितं विरचित ब्रह्मराव वृजराज ।। श्री राम ।।

वर्ण्य विषय:—'नीति शतक' का प्रवचन बृजराज ने गुलेर नरेश रघुनाथ सिंह के आग्रह पर किया था। ग्रन्थ का वर्ण्य विषय भक्ति, ज्ञान नीति और वैराग्य है। वर्ण्य विषय का रहस्योदघाटन यह छन्द करता है :—

देहु कृपा कर कहत नृप, श्री रघुनाथ सुजान।
जबहि आप 'वृजराज कवि, कियो बहुत सनमान ।।

कियो बहुत सनमान, विमल आसन बैठारे।
कुशल प्रश्न बहु बूझि, सुधामय वचन उचारे।।

भक्ति ज्ञान वैराग्य, नीति पथ गथ गुन आकर।
ऐ सब सहित सनेहु, हमें रचि देहु कृपा कर।। [2]

रस कवित्त :

पाण्डुलिपि परिचय और प्रामाणिकता :

पाण्डुलिपि का आकार पृष्ठ 12.7" × 8" है। पृष्ठ संख्या 6 है। पंक्तियों की कुल संख्या 160 है। एक पृष्ठ पर लगभग 26 पंक्तियां हैं और एक पंक्ति में प्रयुक्ताक्षर 19 हैं। रचना की छंद संख्या 27 है।

रस कवित्त का रचनाकाल कवि द्वारा नहीं दिया गया है। इसके लिए अन्तासाक्ष्य का आधार अपनाना पड़ता है। 'रस कवित्त' वृजराज द्वारा 'शिष्टाचार' रचना के बाद के पृष्ठों में लिखे गए हैं। 'शिष्टाचार' का रचना काल सम्वत् 1952–57 के मध्य का ठहरा है। इसलिए इसका रचना काल 57 के बाद का ही माना जा सकता है। वृजराज उपनाम इसके प्रत्येक छंद में प्रामाणिकता स्वता सिद्ध करता है।

वर्ण्य विषय :

'रस कवित्त' का वर्ण्य विषय प्रधानता! शृंगार है। आरम्भ में रघुनाथ नरेश के कनिष्ठ भ्राता कुंअर हरदत्त सिंह का रूप चित्रण है। इसके बाद षड्ऋतु वर्णन। कुलटा, कृपा विदग्धा होरी वर्णन, नेश वर्णन तथा चोर मिहीचनी वर्णन आदि भी 'रस कवित्त' के वर्ण्य विषय हैं।

---

2. नीति शतक : वही छन्द: 2

प्रमाणिकता के लिए विवरण इस प्रकार है :—श्री मन्महाराजाधिराज रघुनाथ सिंघोपख्याने वृजराज कवि विराचितायां मंगल शतक राजनीतक वर्णन नाम पंचम तरंग ॥5॥ श्रीरस्तु सुभ सर्व जगात्ताम ॥

वर्ण्य विषय :

मंगलशतक का वर्ण्य विषय गुलेर नरेश रघुनाथ सिंह का राज्याभिषेक है। रघुनाथ सिंह के विशद चरित्र का कथात्मक शैली में वर्णन किया गया है। पहली तरंग देशकाल निर्णय सम्बन्धी है। जिसमें गलेर राज्य की स्थिति चतुंवर्ण की प्रशंसा, रघुनाथ नरेश की विधुकुल में उत्पति तथा राज समाज का सुख ऐश्वर्य वर्णन है द्वितीय तरंग में तिलक समाज वर्णन तथा तृतीय में राज्याभिषेक वर्णन है चतुर्थ तरंग में श्रृंगार का वर्णन है। रघुनाथ नरेश के विविध श्रंगों का सुन्दर सजीव चित्रण इसका विषय है पंचम तरंग लक्षण उदाहरण परक है। नरेश को इसमें राजनीति का पाठ पढ़ाया गया है। दया, दण्ड, साहस और क्षमा के लक्ष्य तथा उदाहरण दिए गए है। अंत में मंगल शतक के पढ़ने और सुनने का महात्म्य भी दिया गया है।

नीति शतकः पांडुलिपि परिचय :

नीति शतक पाण्डुलिपि का आकार पृष्ठ 12.7″ × 8″ है। पृष्ठों की कुल संख्या सम्पूर्ण ग्रन्थ में 22 है। एक पृष्ठ पर औसतन पंक्तियां सत्ताईस और कुल पंक्ति-संख्या 596 है। कुल कुंडलियां छंद 108 हैं। इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि भी टीका रानी उत्तमी गुलेर राज्य के राजपुस्तकालय से उपलब्ध हुई है।

रचनाकाल और प्रामाणिकताः

नीति शतक का रचनाकाल निम्न कुंडलियों में संकेतिक है :—

साल सुनभ सरनिधि संसी, शुक्ल पूर्न मधुमास।
शनिवासर 'वृजराज' कवि, करयौ सुग्रंथ प्रकास॥
करयौ सुग्रंथ प्रकास, भरयौ उर में अनंद अति।
नीति शतक अभिराम, नाम कुंडली छंद गति॥
पढ़त प्रेम के साथ, भूप रघुनाथ कृपाल सु।
सुनत मित्र सुख यगें, पगें शत्रुन को साल सु॥[1]

इस प्रकार नीतिशतक कवि ने चैत्र मास को शुक्ल पूर्णिमा के अवसर पर सम्वत् 1950 वि0 में शनिवार के दिन लिखना शुरू किया था ग्रंथ की प्रामाणिकता पुणिका में इस प्रकार है :—

1. नीति शतक : वृजराज कवि (हस्तलिखित) छन्दः 3

सोमसी

वर्ण्य विषय:

'राम रस लहरी' का वर्ण्य विषय राम कथा के चरित नायक राम का यश–कीर्तन है। राम कथा के रसोत्पादक एवं उपेक्षित प्रसंगो पर कवि ने विस्तार से लिखा है।

इस प्राचीन राम कथा में वृजराज ने यथा-सम्भव परिवर्तन किये हैं जो सापेक्ष हैं। परिवर्तनों के साथ नवीन मौलिक उद्भावनाएं भी वृजराज द्वारा राम रस लहरी में की गई हैं। राम रस लहरी में आंचलिक लोकाचारों एवं सांस्कृतिक विविध पक्षों का चित्रण हुआ है। सम्पूर्ण ग्रन्थ कवित्त सवैया शैली में लिखा है। कवित्त में 31 अक्षरों के मुक्तक दंडक का प्रयोग ही अधिक है। सवैया में किरीट, मालती तथा दुमिल रूप प्राप्त होते हैं। अलंकारों में अनुप्रास, सन्देह, प्रतीप, उपमा, उल्लेख, सहोक्ति, स्मरण तथा विनयोक्ति की छटाएं यत्र-तत्र उपलब्ध हैं। राम रस लहरी में वृत्यनुप्रास का उदाहरण देखें:—

(पुरुषावृत्ति)

उमंड घुमंड सों प्रचंड भुजदंड ठोंकि
वेग वर सायक, कुवंड गहि लीनो है।
पाय बड़ खेद त्वच नाड़ हाड भेद पुनि
करि बल खिन्न धड़ भिन्न शिर छीनो है॥
कवि 'वृजराज' कहे समर समाज गहे
निरखि प्रसिद्ध मुनि बृद्ध हंसि दीनो है।
गावैं यश गाथ सुर नावैं पद माथ निज
हाथ रघुनाथ जु विराध बध कीनो है। (रा0र0 ल0 तृ0 प्र0 छंद04)

कृतियों का वर्गीकरण :

वृजराज जी की समस्त रचनाओं का परिचय देने के उपरान्त रचनाओं का वर्गीकरण अपेक्षित है।

(अ) **काव्य रूप की दृष्टि से वर्गीकरण :**

प्रबन्ध:– (1) राम रस लहरी
(2) मंगल शतक
(3) दान लीला

मुक्तक

(1) ध्यानाष्टक (2) गंगाष्टक (3) हनुमन्नाष्टक
(4) शमशेर सिंह पंचक (5) दुर्गाष्टक (6) नीतिशतक
(7) श्रेष्ठाचार (8) रस कवित्त (9) बल देव सिंह पंचक
(10) रघुनाथ सिंह पंचक (11) मनवृत्ति वर्णन
(12) अन्य स्फोटक; अन्य कवित्त व स्फुट।

रामरसलहरीः पाण्डुलिपि—परिचय :

'राम रस लहरी' महा काव्य की पाण्डुलिपि का आकार पृष्ठ 8.5" × 6.7" है। पृष्ठों की कुल संख्या 120 है। एक पृष्ठ पर औसतन पंक्तियां 19 और कुल पंक्तियां मिलाकर 2321 बैठती हैं। एक पंक्ति में 16 अक्षर प्रयुक्त हैं। यह ग्रन्थ कवि द्वारा सात प्रकरणों के नाम से बांटा गया है। प्रथम प्रकरण में छंद 61, द्वितीय में 20, तृतीय में 48, चतुर्थ में 33, पंचम में 45, षष्ठ में 70 और सप्तम में 49 हैं। कुल मिलाकर छंद संख्या 326 है। इस ग्रथकी एक प्रति गुलेर नरेश बलदेव सिंह के हाथ की मिली है जिसे वृजराज के जीवन के बीच ही लिखा गया है, क्योंकि इसमें कवि के हाथ सुधार मौजूद है। इस प्रति के द्वितीय प्रकरण में थोड़ी भिन्नता है। वृज राज की प्रति मे 20 छंद हैं तो इस में बाईस। 13 और 14 छंद मूल प्रति में अनुपलब्ध हैं 13–14 छंद मुझे अलग से एक कागज पर वृज राज के हाथों लिखे मिल गए हैं।

रचना काल और प्रामाणिकता :

'राम रस लहरी' 'राम कथा प्रबन्ध काव्य का रचना काल प्रथम प्रकरण में गणेश, सीता और राम की वन्दना के बाद निम्न कवित्त में दिया है :—

> सम्वत् उन्नी सौ साठ (1960) कार्तिक प्रविष्ठे, (8), शुक्ला चतुर्थी
> तिथि द्योस रविनन्द को।
> गोपाचल (गुलेर) देश वेश नगर समाज राज
> तखत सुपास वास बखत बुलन्द को ।।
> श्रीमन् महीय रघुनाथ सिंह के निमित्त,
> बिरचि कवित्त और सवैया शुद्ध छंद को।
> पाय जग जनम पुनीत होबवे के काज
> गावे 'वृजराज' आज गुव राम चद्र को ।।

उपरोक्त कवित्त से रचना काल कार्तिक प्रविष्ठे 8 सम्वत् 1960 वि0 है0। आश्रय दाता रघुनाथ सिंह को समर्पित है। 'तखत सुपास' वास' से वृजराज का राज प्रासाद के निकट गांव में बसने का संकेत भी दिया है। ग्रन्थ की समाप्ति और वृजराज रचित होने का प्रमाण पुष्पिका में इस प्रकार है—"इति श्री वृजराज कवि विरचिते श्री 'राम रस लहरी' वर्णन नाम सप्तम प्रकरण ।। श्री सम्वत् 1974 चैत्र प्रविष्ठे 28 लिखित मिद पुस्तकं ब्रह्मराव वृज लाल वैशाख वदी चन्द्रवासरे समाप्त शुभं भूयात्। "श्री राम"।

1. राम रस लहरीः सुकवि वृजराज (हस्तलिखित प्रति)
प्रकरण प्रथम, छंद 4.

विविधा

सांस्कृतिक समन्वय के उन्नायक बहुभाषाविद खुसरो

—विद्या शर्मा

तेरहवीं सदी की बात है । तुर्किस्तान में एक प्राचीन कबीला था, उसका एक सरदार सैफद्दीन मुगलों के हमलों और अत्याचारों से ऊब कर भारत आया और एटा जिले के पटियाली गांव में बस गया । तब दिल्ली के तख्त पर सुल्तान शमसुद्दीन अल्तमश था। अल्तमश के दरबार में सैफद्दीन की पहुंच हुई और अपनी काबलियत से वह ऊंचे ओहदे पर पहुंच गया । नवाब इमादुलमुल्क की पुत्री से विवाह हुआ ।

इस दम्पत्ति से तीन पुत्रों ने जन्म लिया । दूसरे पुत्र का नाम अबुलहसन था । यही अमीर खुसरो के नाम से प्रसिद्ध हुए । इन का जन्म सन् ईस्वी 1253 में माना जाता है । महीने और तारीख का इतिहासकारों को पता नहीं लग पाया है । कहा जाता है कि जब अमीरखुसरो का जन्म हुआ तो इनके पिता 78 वर्ष के थे और जब खुसरो सात वर्ष के हुए तो इनके पिता का देहान्त हो गया । तब वह अपने नाना इमादुल मुल्क के घर गए । उनकी आयु उस समय एक सौ तेरह वर्ष की थी और उनका घर प्राच्य विद्याओं का केन्द्र था । नाना के विद्वान व्यक्तित्व और उनके घर के शैक्षिक वातावरण में अमीर खुसरो की शख्सीयत का गठन आरम्भ हुआ । खुसरो हिन्दवी संस्कृत, फारसी, तुरकी और अरबी के विद्वान बने और भारत की कुछ प्रान्तीय भाषाओं के ज्ञाता भी ।

खुसरो के व्यक्तित्व में कवि, गद्य कार, कलाकार, संगीतज्ञ, साहसी सैनिक, सन्त और क्रियाशील मनुष्य के गुणों का संगम है । प्राच्य विद्या और पूर्वी संसार में खुसरो का व्यक्तित्व अपना अलग स्थान रखता है । भारत और ईरान के कवि खुसरो को सदैव श्रेष्ठ मानते आए हैं । कहते हैं कि उन्होंने 99 काव्य पुस्तकों की रचना की थी जिनमें कई लाख शेर संग्रहीत रहे होंगे । भक्ति भावना, शान्त रस और शृंगार और माधुर्य भाव सभी कुछ इनका कविता में मिलता है, तभी तो सभी प्रकार की प्रकृति के लोगों को खुसरो की शायरी पसन्द आ जाती है । तेरहवीं चौदहवीं सदी के उत्तरी भारत के वातावरण में सांस्कतिक घटनाओं का अनोखा वायुमण्डल था । पश्चिम के दरों से अनेक कबीले भारत में प्रवेश करके पठान सल्तनत में अनुकूल वाता-

वर्ण्य विषय के आधार पर वर्गीकरण

(क) राम कथा—राम रस लहरी

(ख) लीला काव्य—दान लीला

(ग) प्रशस्ति पटक:—(1) शमशेर सिंह पंचक
(2) बल देव सिंह पंचक
(3) रघुनाथ सिंह पंचक
(4) अन्यस्फोटक व अन्य कवित्त

(घ) नीतिपरक: (1) नीति शतक
(2) मन-वृत्ति वर्णन

(ङ) मंगल महोत्सव वर्णन
(1) मंगल शतक
(2) शिष्टाचार

(च) स्तुति परक: (1) ध्यानाष्टक
(2) गंगाष्टक
(3) हनुमन्नाष्टक
(4) दुर्गाष्टक

(छ) रस परक:— रस कवित्त

साहित्यिक महत्व की कृतियां :

वृजराज जी की साहित्यिक महत्व की कृतियां निम्न हैं—

(1) राम रस लहरी
(2) मंगल शतक
(3) नीति शतक
(4) दान लीला
(5) रस कवित्त
(6) दुर्गाष्टक अथवा स्तुति-अष्टक

वृजराज का काव्य-कलाप जितना विस्तृत है उतना ही काव्य-कल्प प्रखर है। भविष्य में वृजराज के काव्य पर होने वाला शोध कार्य ही उनका हिन्दी साहित्य में प्रदेय आंक सकता है।

—कीर्तिभवन गुलेर, हिमाचल प्रदेश।

सोमसी

शब्द श्री

'महिला' के पर्यायवाची पहाड़ी शब्द

महिला शब्द के हिन्दी पर्यायवाची अनेक शब्द हैं और ऐसे प्रतीत होता है कि वे सभी शब्द महिला के अलग अलग गुणों को अभिव्यक्त करते हैं। पर्यायवाची शब्दों का मूल सिद्धान्त भी सम्भवतः यही है कि एक वस्तु के अलग गुणों अथवा वस्तु को अलग अलग अवस्थाओं को अभिव्यक्त करने के लिए पर्यायवाची शब्द अस्तित्व में आए होंगे। महिला शब्द स्वयं 'महि' शब्द से सम्बन्ध रखता हुआ प्रतीत होता है। महि के अन्य पर्यायवाची शब्द पृथ्वी, भूमि, धरती, अवनी आदि हैं। पृथ्वी की प्रथम दो शक्तियों में श्री और भूमि का उल्लेख है। इन दोनों को रचना और सर्जना की देवियां माना गया है। 'महि' शब्द से ही महिपाल बना है जिसका अभिप्राय भूमिरक्षक राजा से है। मध्यकालीन भाषाओं में 'महिअला' शब्द का प्रयोग 'जल, थल, महिअल' वाक्यखण्ड में आकर 'भूमि के ऊपर का, 'आकाश वाला' अर्थ देता है। किन्हीं देसी भाषाओं में 'महिवाल' शब्द पति अथवा प्रियतम के अर्थ में आता है। 'महिला' शब्द, के लिए अन्य हिन्दी शब्द हैं—स्त्री, रमणी, कामिनी; वीरांगना, ललना, दारा आदि। ये सभी शब्द 'ह्युमन फिमेल' के अलग अलग गुणों को अभिव्यक्त करते हैं।

हिमाचल की पहाड़ी भाषा में महिला के लिए अनेक शब्द हैं। कुछएक का संक्षिप्त उल्लेख हम यहां करते हैं :—

1. **जोआनस** — रूपान्तर, जुनास, जनास।
   अर्थ (1) महिला
   (2) अपनी पत्नी
   (3) दम्पत्ति प्रयोग में खसम-जोआनस
2. **जो** — चुराह क्षेत्र में प्रयुक्त
   अर्थ (1) पत्नी
   सम्भवतः जोरू का अवशिष्ठ रूप है। संस्कृत योषित मिलाने, जोड़ने के अर्थ में प्रयुक्त होता है।
3. **बेटड़ी** — कुल्लु क्षेत्र में प्रयुक्त, विवाहित महिला। प्रयोग वैभिन्य से यही शब्द करसोग क्षेत्र में 'बेटली' हो जाता है।

वरण बना कर ऊंचे रुतबे और ओहदे पा रहे थे और उच्चस्थ होकर अपनी संस्कृति और जीवन शैली को सुरक्षित रख रहे थे । उन कबीलों की जीवन शैलियों के साथ जुड़कर फारसी, अरबी, तुर्की आदि भाषाओं अथवा उनके शब्द बिखर कर विस्तार पा रहे थे । ऐसी बेला में खुसरो ने खालिक बारी की रचना की। इस पुस्तक में हिन्दवी फारसी और अरबी शब्दों के पर्यायवाची संचित किए हैं । आत्मीयता स्थापित करने का सब से प्रबल माध्यम होता है—भाषा । किन्हीं दो भाषाओं के पर्यायवाची शब्द का संकलन और संचयन उस आत्मीयता को आगे बढ़ाता है । विभिन्न जातियों और प्रजातियों के लोगों के हृदयों को निकट लाने के लिए संगीत का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है । खुसरो ने संगीत के द्वारा जनसाधारण में आपसी समझ और पारस्परिक बोध उत्पन्न किया ।

पांच सुल्तानों के दरबारों में रह कर संसार का सारा कार्य-व्यापार निभाने वाला खुसरो अपना अधिकांश समय खानकाह में बिताया करता था । हजरत निजमुद्दीन औलिया इन के लिए कहा करते थे :—

ऐ तुर्क, मैं सब से तंग आ जाता हूं ।
यहां तक कि अपने आप से भी,
किन्तु तुम से कभी तंग नहीं आता ।।

खुसरो हिन्दी भाषा के प्रशंसक थे उनका निम्नलिखित कथन इस का साक्षी है--

"मैं भूल में था, पर अच्छी तरह सोचने पर हिन्दी भाषा फारसी से कम नहीं ज्ञात हुई, सिवाए अरबी के जो प्रत्येक भाषा की मीर है और सबों में मुख्य है रई और रोम की प्रचलित भाषाएं समझने पर हिन्दी से कम मालूम हुई........हिन्दी भाषा भी अरबी के समान है क्योंकि इसमें भी मिलावट का स्थान नहीं है ....यदि अरबी का व्याकरण नियम है तो हिन्दी में भी उससे एक अक्षर कम नहीं"।

पिता की मां (दादी), सास की मां, आदि के लिए होता है।

28.	बांठिन	रूपान्तर बांठन, बांठिए । अर्थ बनी-ठनी सुन्दर स्त्री ।
29.	बन्नी	दुल्हन, रूपान्तर बन्दी आज्ञाकारी दुलहन ।
30.	ध्याण	अपने कुल की विवाहित कन्याएं जो विवाह उपरान्त अपने ससुराल रहती हैं और कभी कभार मायके आएं । प्रयोग में धी–ध्याण शब्द अभिव्यक्ति का प्रयोग इकट्ठा होता है ।
31.	ध्योचटी	पुत्री की पुत्री ,'दोहती'।
32.	रीयण	अपने कुल में आई विवाहित स्त्रियां रमणियां।
33.	भन्जोची	भानजे की भानजी बहिन की पुत्री की पुत्री ।
34.	माउलटी	मामे की पुत्री ।
35.	भन्जोटी	भानजे (बहिन के पुत्र) की पुत्री ।
36.	मितरान्टी	रूपान्तर मितरानी, अर्थ साले की पत्नी। गादी में मित्रणी का अर्थ धर्म बहिन।
37.	सल्याह	साले की पत्नी ।
38.	जनाना	रूपान्तर जनानी, अर्थ असम्बन्धित विवाहित स्त्री ।
39.	त्रीमत	रूपान्तर तीवीं अर्थ असम्बन्धित विवाहित स्त्री।
40.	कनोचटी	पड़पोती, पुत्र के पुत्र की पुत्री ।
41.	रिड़े	चम्बा के चुराह क्षेत्र में अपने से छोटी स्त्री को 'रिड़े'' सम्बोधन से बुलाया जाता है ।
42.	मामलेती	मुआवज़ा देकर लाई हुई पत्नी यह शब्द भी चम्बा के चुराह क्षेत्र में प्रयुक्त होता है।
43.	गुश्रेटी	अपने गोत की लड़कियां ।
44.	मुहींण	घर की मुख्या (बड़ी) औरत ।
45.	पितराणी	ताई या चाची (चम्बा के चुराह क्षेत्र में प्रयुक्त) ।

× × ×

नोट––अगले अंक में इसी वर्ग के कुछ और शब्द दिए जाएंगे और फिर इन शब्दों द्वारा अभिव्यक्त सामाजिक परिप्रेक्ष्य पर एक टिप्पणी दी जाएगी । ––सम्पादक

4.	छुग्रोड़ी	महासू क्षेत्र में प्रयुक्त अर्थ विवाहित महिला।
5.	बायर	चौपाल क्षेत्र में प्रयुक्त अर्थ विवाहित महिला।
6.	बोग्रारी	महासू क्षेत्र में प्रयुक्त, विवाहित महिला।
7.	बिट्टी	(1) पुत्री, "टेरकी" चम्बा के चुराह क्षेत्र में प्रयुक्त (2) अविवाहित कन्या।
8.	छोग्रटी	रूपान्तर शोरटी, शोरी, छोरी, घटिया प्रयोग में छोकरी), लड़की। अर्थ अविवाहित किशोरी कन्या।
9.	माट्ठी	अविवाहित किशोरी कन्या।
10.	ईजी	रूपान्तर इजे, इजा। अर्थ मां, जननी, मांठी, ईज—चाची, बड्डी ईज—ताई।
11.	दाई	रूपान्तर दादी, दैद—अर्थ बहिन।
12.	बोबी	बहिन के लिए सम्बोधन शब्द।
13.	बोबी	बहिन के लिए सम्बोधन शब्द इसका अधिकतर प्रयोग एक स्त्री दूसरी समवयस्क स्त्री के लिए सामीप्य जताने के लिए करती है।
14.	बूबी	पिता की बहिन, बूग्रा, फूफी।
15.	दरानी	पति के छोटे भाई की पत्नी।
16.	जठानी	पति के बड़े भाई की पत्नी।
17.	जठाल्	पत्नी की बड़ी बहिन जो सुसराल में रहती है।
18.	दरीग्र	'दरानी' की पुत्री।
19.	जठीग्र	जेठानी की पुत्री।
20.	सकीय	सौत की पुत्री।
21.	सोउकेठी	सौत की पुत्री, रूपान्तर सकलींडी।
22.	सौकन	रूपान्तर 'सउक' पति की दूसरी पत्नी।
23.	शाशु	रूपान्तर शासड़ी अर्थ सास पति/पत्नी की मां।
24.	शाशटी	पति/पत्नी की बुग्रा।
25.	पसेचटी	रूपान्तर पोचड़ी अर्थ पोती।
26.	कनाली	भानजी, बहिन की पुत्री।
27.	नानी	भीतरी पर्वतमाला में यह शब्द वृद्धा स्त्रियों के लिए ग्राम तौर पर इस्तेमाल होता है। निकट सम्बन्धों में इसका प्रयोग मां की मां

tharahkardu.in

अकादमी के प्रकाशन

1. पहाड़ी लोक रामायण :—प्रदेश के विभिन्न जनपदों में लोक-प्रचलित राम-कथा के स्वरूपों का संकलन। पुस्तक हिन्दी तथा पहाड़ी भाषा में है।

   मूल्य—12/- रु० मात्र।

2. छनाटः—महाकवि भास के छः संस्कृत नाटकों का पहाड़ी भाषा में अनुवाद।

   मूल्य—12/- मात्र।

3. माला रे मणकेः—हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी भाषा के कवियों की कविताओं का संकलन।

   मूल्य—6/- रु० मात्र।

4. ऋतम्भराः—हिमाचल प्रदेश के संस्कृत कवियों की कविताओं का (हिन्दी अनुवाद सहित) संकलन।

   मूल्य—6/- रु० मात्र।

5. इन्दु काव्यः—सिरमौर रियासत का संस्कृत भाषा में इतिहास (प्रैस में)

सचिव,
हिमाचल कला, संस्कृति-भाषा
अकादमी, परिमहल, शिमला-9।

tharahkardu.in

P&SHPS—268-A.C.L./76-23-3-76—1,000.

H.A.A.C.L. आर० एन० 28271/75

निदेशक, शिक्षा विभाग हि० प्र० द्वारा पत्राङ्क ई डी ऐन–एच (8)–6(3) 1/75, 24 फरवरी, 1975 के अनुसार प्रदेश के समस्त कालेजों, पाठशाला व जिला पुस्तकालयों के लिये स्वीकृत ।

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परिमहल, शिमला-9 द्वारा प्रसारित तथा उप-नियन्त्रक, मुद्रण तथा लेखन सामग्री, हिमाचल प्रदेश, शिमला-3 द्वारा मुद्रित ।